

**THE BOOK WAS
DRENCHED**

**TEXT FLY WITHIN
THE BOOK ONLY**

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180862

UNIVERSAL
LIBRARY

नं० १ कबीरसागर प्रथम खंड.

मृ० १) ज्ञानसागर.

पृ० १ से १०७ तक.

सत्य ॥

कबीरसागर ।

ज्ञानसागर ।

प्रथम खण्ड ।

कबीरपंथी भारतपथिक स्वामी श्रीयुगलानन्द

(विहारी) द्वारा संशोधित.

गंगाविष्णु श्रीकृष्णदास,

मालिक--“ लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर ” स्टीम प्रेस,

कल्याण-मुंबई.

संवत् १९८५, शके १८५०.



मुद्रक और प्रकाशक—

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास

मालिक—“लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर” स्टीम्-प्रेस, कल्याण-मुंबई.

सन् १८९७ के आक्ट २५ के व मुजब रजिष्टरी सब हक
प्रकाशकने अपने आधीन रखा है.



श्रीज्ञानसागरकी अनुक्रमणिका ।

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
मुक्तिमेद अमरलोक वर्णन १		सृष्टि उत्पत्तिकी कथा वर्णन ११	
सत्य पुरुषका वर्णन २		तीन देवका प्रगट होना और आदि	
सृष्टि उत्पत्ति वर्णन प्रारम्भ ४		मायाका तीनोंका काम बताना १७	
द्वीप वर्णन ५		ब्रह्माका समुद्र खुदवाना १८	
धर्मरायके द्वीप नहीं पानेका वर्णन ६		भवानीकी आज्ञासे तीनों देवका	
धर्मरायका सत्यपुरुषकी सेवा करके		समुद्र मंथन करना और तीन	
द्वीप पानेका वर्णन । सहजकी		कन्याका प्रकट होना ,,	
विन्ती ७		भवानीकी आज्ञासे तीनों देवका खारै	
धर्मरायका अधिक स्थान मांगना		समुद्रको मंथन करना और उससे	
और मानसरोवरका पाना ८		वेद आदिका प्रगट होना १९	
धर्मरायका कामिनीको निगल		चार खानिकी उत्पत्ति २०	
जाना ,,		ब्रह्माको वेद पढ़कर सन्देह होना	
पुरुषका निरञ्जनको शाप देना ९		और माताकी आज्ञासे पिताकी	
पुरुषका योग संतायनको जीवोंको		खोजमें जाना २१	
कालके फन्दसे छुड़ानेकी आज्ञा		मायाका गायत्रीको उत्पन्न करके	
देना और योगसंतायन तथा		ब्रह्माको बुलानेके लिये मेजना	
कालका युद्ध ,,		और मायाका ब्रह्मको झूठ बोल-	
कन्याका धर्मरायके पेटसे निकलना		नेके कारण शाप देकर निरञ्जनसे	
और धर्मरायका उसे ठगना तथा		आप शाप पाना २२	
दोनोंका मिलकर सृष्टिकी रचना		मायाका विष्णुको पिताके खोजके	
करनेका विचार करना और रचना ११		लिये मेजना । विष्णुका शुकसे	
चौदह यमका नाम और कर्म १२		श्याम हो जाना । मायाके पास	
कालका जीवोंको दुःखित करना		आकर विष्णु सत्य बोलना और	
और सत्य पुरुषकी आज्ञासे ज्ञानसे		तीनों लोकका राज्य पाना २३	
ज्ञानीजीका पृथ्वीपर आना १३		मायाका महादेवको वर देना २४	
धर्मराय और ज्ञानीजीका वार्तालाप		तीनों देवका मानुषी सृष्टिकी उत्पत्ति	
और कौल करार ,,		करना । मनुष्यकी अधिकतासे	
धर्मरायका ज्ञानीजीसे जगन्नाथकी		पीडित होकर पृथ्वीका गौरूप	
स्थापनाका वचन लेना ,,		धरके विष्णुके समीप जाना और	

विषय.	पृष्ठ.	विषय.	पृष्ठ.
विष्णुका अवतार लेनेका वचन देना	 २५	द्रापरमें कबीर साहबका पृथ्वीपर आना ११	
अवतारोंकी कथा ।		इन्दुमतीकी कथा	 ११
ब्रह्म चरित्र (बावन औतार)	 २७	कलियुगमें कबीर साहबका प्राकट्य	 १७
सगकसनन्दन चरित्र	 २९	जगन्नाथके मन्दिरकी स्थापना	 १८
नारद चरित्र	 ३१	चन्द्रवारमें कबीर साहबका जाना	 ७१
श्रवण चरित्र	 ३२	नूरीको मिलनेकी कथा	 ७२
सती दाहकी कथा	 ३३	नूरीके पूर्व जन्मकी कथा	 ११
शिवकी समाधि छुड़ानेके लिये काम-देवका प्रयत्न करना और नारदका कामवश होना तथा विष्णुको शाप देना	 ३४	बाललीला और रामानन्दको गुरु करनेका वर्णन	 ७५
विष्णुका दशरथके घर औतार लेना अर्थात् रामकथा वर्णन	 ३५	सिकन्दरशाहकी वार्ता और रामानन्द-जीका कल होना	 ७७
कृष्ण चरित्र वर्णन	 ४४	मगहर गमनकी कथा	 ११
पाण्डव यज्ञ तथा सुपच सुदर्शनकी कथा वर्णन	 ५२	रतनाकी कथा	 ८०
कृष्णका स्वर्गारोहण और जगन्नाथकी स्थापना	 ५४	चौका आरतीकी विधि	 ८३
निकलंक अवतारकी वार्ता	 ५५	योग कर्मका वर्णन	 ८५
उत्पत्ति परलोकका लेखा	 ५६	अष्ट कमल वर्णन	 ८६
कबीर चरित्र ।		गेही रहनी	 ९०
सत्ययुगमें कबीर साहबका पृथ्वीपर आना	 ५७	आरतीका योगरूपसे वर्णन	 ९१
प्रेतमें कबीर साहबका पृथ्वीपर आना	 ५८	योगकी श्रेष्ठता	 ११
		पूनोंकी बडाई	 ९२
		गुरुवाके लक्षण	 ९३
		गुरुलक्षण	 ९६
		परलोकका मार्ग । सत्यलोक और हंसका वर्णन	 ९७
		भविष्यत् कथा । चक्ररथीका वर्णन	 १०५

सत्य नाम ।



श्री कवीर साहिव ।



सत्यसुकृत, आदि अदली, अजर, अचिन्त, पुरुष,
मुनीन्द्र, करुणामय, कवीर, सुरती योग संतायन,
धनी, धर्मदास, चूरामणिनाम, सुदर्शननाम, कु-
लपतिनाम, प्रमोध गुरुवालापीर, केवल नाम,
अमोल नाम, सुरतिसनेही नाम, हक्क नाम,
पाकनाम, प्रगट नाम, धीरज नाम
उग्र नाम, दया नामकी दया,
वंशव्यालीसकी दया.

अथ ज्ञान सागर प्रारम्भः ।

सोरठा-सत्यनाम है सार, बूझो संत विवेक करि ॥
उतरो भव जल पार, सतगुरुको उपदेश यह ॥
सतगुरु दीनदयाल, सुमरो मन चित एककरि ॥
छेड सके नहिं काल, अगम शब्द प्रमाण इमि ॥
बंदौ गुरु पद कंज, बंदीछोर दयाल प्रभु ॥
तुम चरणन मन रंज, देत दान जो मुक्ति फल ॥
चौपाई ।

मुक्ति भेद मैं कहौं विचारी । ता कहैं नहिं जानत संसारी ॥
बहु आनंद होत तिहिं ठाऊँ । संशय रहित अमरपुर गाऊँ ॥

तहँवा रोग सोग नहिं होई । क्रीडा विनोद करे सब कोई ॥
 चंद्र न शूर दिवस नहिं राती । वरण भेद नहिं जाति अजाती ॥
 तहँवा जरा मरन नहिं होई । बहु आनंद करै सब कोई ॥
 पुष्प विमान सदा उजियारा । अमृत भोजन करत अहारा ॥
 काया सुन्दर ताहि प्रमाना । उदित भये जनु षोडस भाना ॥
 इतनौ एक हंस उजियारा । शोभित चिकुर तहां जनु तारा ॥
 बिमल बास तहँवां बिगसाई । योजन चार लौं बास उडाई ॥
 सदा मनोहर क्षत्र सिर छाजा । बूझ न परै रंक औ राजा ॥
 नहिं तहां काल बचनकी खानी । अमृत बचन बोलै भल बानी ॥
 भालस निद्रा नहीं प्रकासा । बहुत प्रेम सुख करै विलासा ॥

साखी—अस सुख है हमरे घरे, कहै कबीर समुझाय ॥

सत्त शब्दको जानिके, असथिर बैठे जाय ॥

चौपाई ।

सुन धर्मनि में कहौं समुझाई । एक नाम खोजो चितलाई ॥
 जिहिं सुमरत जीव होय उबारा । जात उतरौ भव जल पारा ॥
 काल बीर बांका बड होई । बिना नाम बाचै नहिं कोई ॥
 काल गरल है तिमिर अपारा । सुमिरत नाम होय उजियारा ॥
 काल फांस डारै गल माहीं । नाम खड्ग काटत पल माहीं ॥
 काल जँजाल है गरल स्वभाऊ । नाम सुधारस विषय बुझाऊ ॥
 विषकी लहर मतो संसारा । नहिं कछु सूझे वार न पारा ॥
 सुर नर माते नाम विहूना । औंट मुये ज्यों जल बिन मीना ॥
 भूल परे पाखँड व्यवहारा । तीरथ वृत्त औ नेम अचारा ॥
 सगुण जोग जुगति जो गावै । बिना नाम मुक्ती नहिं पावै ॥

साखी—गुण तीनोंकी भक्तिम, भूल परचो संसार ॥

कहै कबीर निज नाम बिन, कैसे उतरै पार ॥

धर्मदास वचन—चौपाई ।

बिनऊँ स्वामी दोइ कर जोरी । कहौ गुसाईँ नामकी डोरी ॥
 निरंकार निरंजन नाऊँ । जोत स्वरूप सुमरत सब ठाऊँ ॥
 गावहि विद्या वेद अनूपा । जसरचना कियो ज्योतिसरूपा ॥
 भक्ति वत्सल निजनाम कहाई । जिन यह रचि सृष्टि दुनियाई ॥
 सोई पुरुष कि आहि निनारा । सो मोहि स्वामी कहौ व्यवहारा ॥
 जिहिंते होय जीवको काजा । सो मैं करहुं छोड कुल लाजा ॥
 होहु दयाल दयानिधि स्वामी । बोलहु वचन सुधा रस बानी ॥
 नाम प्रभाव निज मोहि बताओ । होहु दयाल मम तृषा बुझाओ ॥

साखी—जो कुछ मुझे सन्देह है, सो मोहि कहो समुझाय ॥

निश्चय कर गुरु मानिहौं, औ बंदो तुम पायँ ॥

साहिब कबीर वचन—चौपाई ।

तुमसों कहौं जो नाम विचारी । ज्योति नहीं वह पुरुष न नारी ॥
 तीन लोक ते भिन्न पसारा । जग मग जोत जहाँ उजियारा ॥
 सदा बसंत होत तिहि ठाऊँ । संशय रहित अमरपुर गाऊँ ॥
 तहँवा जाय अटल सो होई । धरमराय आवत फिरि रोई ॥
 बरनो लोक सुनो सत भाऊ । जाहि लोकतें हम चलि आऊ ॥
 जग मग जोती बहुत सुहावन । दीप अनेक गिनें को पावन ॥
 जगमग ज्योति सदा उजियारा । करी अनेक गिने को पारा ॥

छंद ।

जहँ ज्योति जग मग अति सुहावन तत्त्व वारिध अतिचलै ॥

ढहत दोई कुल तिमिर मनो पद्म झलझल हलै ॥

फेन उठगन बहन लाग शोसि मनोहर हेरि को ॥

किमि देउँ पटतर बूझ देखो भाव नहिं वहां जोर को ॥

सोरठा—शोभा अगम अपार, वर्णत बनें न एक मुख ॥

कही न जात विसतार, जो मुख होवै पदम सत ॥

धर्मदास वचन-चौपाई ।

हे स्वामी मोहि आदि सुनाओ । कैसे पुरुष वह लोक बनाओ ॥
कैसे द्वीप करी निर्मावा । होहु दयाल सो मोहि बतावा ॥

साहब कबीर वचन ।

सुन हंसा तोहे कहब विचारी । लोक द्वीप जिमि करी सम्हारी ॥
हते अदेह दुतिया नहिं काऊ । सुरति सनेही जान कछु भाऊ ॥
नहिं तहाँ पांच तत्त्व परगाशा । गुण तीनों नहिं नहीं अकाशा ॥
नहिं तहँ ज्योति निरंजन राया । नहिं तहँ दशौ जनम निर्माया ॥
नहिं तहँ ब्रह्मा विष्णु महेशा । आदि भवानी गवारि गनेशा ॥
नहिं तहँ जीव सीव कर मूला । नहिं अनंग जिहिंते सब फूला ॥
नहिं तहँ ऋषी सहस्र अठासी । षट् दरशन न सिद्ध चौरासी ॥
सात वार पन्द्रह तिथि नाहीं । आदि अंत नहिं कालकी छाहीं ॥

छंद ।

नहिं कूर्म चक्रिय वारि पर्वत अग्नि वसुधा नाहिं हो ॥
शून्य विशून्य न तहां होई अगाध महिमा सो कहा ॥
जिमि पुहुप तिमि छाया राखो बास भरो ता संग मई ॥
स्वरूप बूझो अगम आदि महिमा अक्षर अंग मई ॥

सोरठा-प्रकट कहो जिमि रूप, देखो हृदय विचारिके ॥

आदहि रूप स्वरूप, जिहिं ते सकल प्रकाश भयो ॥

चौपाई ।

तिनहिं भयो पुन गुप्त निवासा । स्वासा सार तें पुहुमि प्रकाशा ॥
सोई पुहुप विना नर नाला । ज्योति अनेक होत झल हाला ॥
पुहुप मनोहर सेतई भाऊ । पुहुप द्वीप सबही निर्माऊ ॥
अजै सरोवर कीन्हो सारा । अष्ट कमल ते आठौं वारा ॥
षोडश सुत तबही निर्मावा । कछु प्रगट कछु गुप्त प्रभावा ॥

पुहुप द्वीप किमि करब बखाना । आदि ब्रह्म तहँवा अस्थाना ॥
सत्रह संख पंखुरी राजै । नौ सौ संख द्वीप तहाँ छाजै ॥
तेरह संख सुरंग अपारा । तिहि नहि जान काल बरियारा ॥

धर्मदास वचन ।

धर्मदास कहैं सुनो गुसाई । द्वीप अनेक पुरुष के ठाई ॥
सो स्वामी मोहि भेद बताओ । दया करो जनि मोहि दुराओ ॥
तुमसों बरनि कहौ सत भाऊं । मैं मनो आज महां निधि पाऊं ॥
सुनत वचन गद २ सिर मोरा । थकित भये जनु चंद्र चकोरा ॥
मैं भुजंग तुम मलया गीरा । करहु दया मम दुखित शरीरा ॥

साहब कबीरौ वचन ।

धर्मदास पूछो जो मोहीं । सो मैं भेद कहौ सब तोहीं ॥
कमल असंख भेद कहैं जाना । तहँवा पुरुष रहे निर्वाना ॥
मोही सतगुरु दियो बताई । सो सब भेद कहौ तुम पाई ॥
सप्त पंखुरी कमल निवासा । तहँवा कीन्ह आप रहि वासा ॥

साखी-शीश दरस अति निर्मल, काया न दीसत कोश ॥

पदम संपुट लग रहै, बानी विगसन होय ॥

चौपाई ।

प्रगट द्वार जब देखौ शीशा । धर्मनि हिये देखौ अहै ईशा ॥
पाइर द्वीप जहँ निर्मल ठौरा । सो सब भेद कहौ कछु औरा ॥
अंबू द्वीप हंस को थाना । पाइर द्वीप पुहुप निर्वाना ॥
नौसौ करी ताहि के हीठा । गुरु प्रसाद सबै हम दीठा ॥
तहां आइ पुन पाइर द्वीपा । मंजुल मंगल करी समीपा ॥
तहँवा जाइ अटल सो होई । धर्मराज आवै फिर रोई ॥
द्वीप अनेक औ करी अनेका । पाइर द्वीप हंस के थेका ॥
चार करी हैं सब से सारा । बहु शोभा तहँ रूप अपारा ॥

साखी-करी भेद सुन हंसा, आइ देखु सत लांक ॥

गुरु जो भेद बतावहीं, मिट जाई सब धोख ॥

धर्मदास वचन-चौपाई ।

हे स्वामी मैं बिनऊं तोही । कछु संशय जिव उपज्यो मोही ॥
धर्मराय नहिं पायब दीपा । और सबै सुत द्वीप समीपा ॥
कारण कौन दरस नहिं होई । कहौ अगम जनि राखो गोई ॥

साहब कबीरौ वचन ।

जो तुम पूछो अगम सन्देशा । सो सब तोहि कहौ उपदेशा ॥
आदि पुरुष अस कीन्हों साजा । पांच बुन्द हुलास उपराजा ॥
बुन्दहि बुन्द अंड परकाशा । धर्म धीर जेहि अंड निवासा ॥
अटल जोत सुरंग उजियारा । तहँवा अंड रहै मनियारा ॥
धर्म धीर जबही उतपाना । आदि ब्रह्म तबही सकुचाना ॥
एकहि मूल सबै उपजाई । मेंट्यो तेज अंड कुन्याई ॥

साखी- तेज रह्यो जिहि अंड मो, तेहि नहिं दीन्हों ठौर ॥

तेहितें उपज्यो धर्म अब, वंश अगिन के जोर ॥

चौपाई ।

बावन लक्ष बेर अनुमाना । मेंटो न मिटत शब्द परवाना ॥
एकहि मूल सबै उपजाई । मिटै न अंड तेज अन्याई ॥
धर्मराय है काल अँकूरा । उपजा तहां काल कौ मूरा ॥
तबहि पुरुष अज जुगत विचारा । रहै धर्म द्वीप सों न्यारा ॥
जोपै रहै सदा सिव काई । तौ एक द्वीप तुमहि निर्माई ॥
पुरुष शब्द ते सबै उपराजा । सेवा करें सुत अति अनुरागा ॥
जानें भेद न दूसर कोई । उत्पति सब की बाहिर होई ॥
अभिअन्तर जो उत्पति होई । काया दरश पाय सब कोई ॥
काया दरश सुरति इक पावे । संगहि द्वीप सबै निर्मावे ॥

धर्म धीर नहिं पावे द्वीपा । और सबै सुत द्वीप समीपा ॥
धर्मराय अस कीन्ह बनाई । कर सेवा तेहि जागहि आई ॥
सेवा बहुत भांति सों किएऊ । आदि पुरुष तब इषित भयऊ ॥

साखी--सेवा कीन्हा धर्म बड, दियो ठौर अब सोय ॥

जाय रहो वहि द्वीप में, सेवा निर्फल न होय ॥

चौपाई ।

सात द्वीप कौ पायो राजू । भयो अनंद धर्म मन गाजू ॥
सेवा करि पुन कीन्ह निहोरा । सुनो सहज तुम भ्राता मोरा ॥
सेवा बसहि द्वीप में पाएऊ । कैसे रचो मोहि गम्य न आएऊ ॥
पुरुष सों विनती करु यह भारी । हे भ्राता मैं तुम बलिहारी ॥
करिहौं सोई जो आज्ञा पाऊ । कैसे मैं नव खंड बनाऊ ॥
चले सहज जहँ द्वीप अमाना । कीन्ह जाय दण्डवत प्रणामा ॥
बहुविधि विनती सहज कियो जबही । बेग पुहुप बानी भई तबही ॥
पुरुष वाणी तैं भया उजियारा । सुनहु सहज तुम बचन हमारा ॥
पक्षि पालना पाय है अंडा । सो लै धर्म रचै नव खंडा ॥
चले सहज तब बार न लावा । धर्म धीरसों मता सुनावा ॥

साखी--सुनत सँदेशो पुरुष को, धर्म शीस तब नाव ॥

पायो आज्ञा पुरुष की, अब फाबी मो दांव ॥

चौपाई ।

सुनत सँदेश भयो हंरषंता । आन अंड जो चले तुरंता ॥
देखो धर्म जब कूर्म शरीरा । बारह पालंग है बल वीरा ॥
नव पालंग धर्म परमाना । बनै ना घात तब करे तिवौना ॥
धावाह दशहू दिशा रिसाई । कैसे अंड लेऊ मैं जाई ॥
तबहि जुक्ति अस कीन्ह बनाई । तोरि सीस अस करचो उपाई ॥
शीस कीन्ह तब नख सों छीना । अमी अंक तोरि कियो मीना ॥

शीस तोरि लियो द्वीप अपारा । तबही धर्म भयो बरियारा ॥
 पांचौ तत्त्व अंडसों लीन्हा । गुन तीनों सुशीस कर कीन्हा ॥
 पांचौ तत्त्व तीन गुन सारा । यही धर्म सब कीन्ह पसारा ॥
 तब कियो नीर निरंजन राया । मीन रूप तबही उपजाया ॥
 करि चरित्र धर्म तब आया । आय सहज सों विनती लाया ॥

साखी—जाय कहौ तुम पुरुष सों, बहु सेवा मैं कीन्ह ॥

सबसुत रहिहैं लोकमँह, नव खँड हम कहँ दीन्ह ॥

चौपाई ।

इतने में नहिं मोर रहाऊ । जहँवा रहब देव मोहि ठाऊँ ॥
 चले सहज पुरुष पर जबहीं । विनती धर्म कीन्ह पुनि तबहीं ॥
 मांग्यो बीज कीन्ह बड लोभा । जातैं द्वीप पावों मैं शोभा ॥
 सहज विनय पुरुष सों कीन्हा । हे स्वामि तुव सुत बल हीना ॥
 माँगै और ठौर पुनि सोई । धर्म धीर जो तुव सुत होई ॥
 अति अधीन माँगै जो बीजे । सोहे द्वीप पुरुष वहि दीजे ॥
 तबहि पुरुष सेवा बश भयऊ । अष्टांगी कामिनि सो दयऊ ॥
 मान सरोवर ताकर नाऊ । सोऊ दियो धर्म कहँ ठाऊँ ॥
 अष्टांगी कन्या उत्पानी । जासों कहिये आदि भवानी ॥
 रूप अनूप शोभा अधिकाई । कन्या मान सरोवर आई ॥

साखी—चौरासी लक्ष जीव सब, मूल बीज के संग ॥

ये सब मान सरोवरा, रच्यो धर्म बड रंग ॥

चौपाई ।

सहज संदेशो ल्याये जहँवा । धर्म धीर ठाढे हैं तहँवा ॥
 कह्यो संदेश धर्म मन गाजा । मान सरोवर जाइ विराजा ॥

साखी—देखि रूप कामिनि कौ, पल भर रह्यो न जाइ ॥

आगे पीछे ना सोचिया, ताकौ लीन्हेसि खाइ ॥

चौपाई ।

कन्या सों अस कीन्ह अन्याई । सहजसों लियो जो तुरत छुडाई ॥
 यहै चरित पुरुष जब देखा । दीन्हें शाप सो कहों विशेषा ॥
 सवा लक्ष जीव करौ अहारा । तऊ न ऊदर भरै तुम्हारा ॥
 सुमिरन कूर्म पुरुष को कीन्हौ । अहहो पुरुष धरम सिर छीना ॥
 तुव आज्ञा मैं अंड जो दान्हा । धर्मराय काहे सिर लीन्हा ॥
 सुनत बचन प्रभु बहुत रिसाने । जोगजीत तबही उत्तपाने ॥
 आज्ञा भई तुम बेग सिधारौ । धर्मराय कहँ मार निकारौ ॥
 आज्ञा मांग चले तब ज्ञानी । धर्मराय सों बातें ठानी ॥
 अरे पापी तू पुरुष को चोरा । भागहु बेग कहा सुन मोरा ॥
 सुनतहि क्रोध भये धर्म धीरा । जोग जीत के सन्मुख भीरा ॥
 जोग जीत तबहीं फटकारा । जाय रहौ तब लोक ते न्यारा ॥
 जोग संतायन चल भये जबही । धर्म धीर आयौ पुनि तबही ॥
 बार अनेक युद्ध जिहि कीन्हा । मारे न मरत बहुत बल कीन्हा ॥

धमराज वचन ।

तब मैं हतौ पुरुष के ठाऊँ । तब नहिं सुन्यो तुम्हारौ नाऊँ ॥
 को तुम हौ सो मोहि बताऊ । सहज भाव तुम फेर बनाऊँ ॥

ज्ञानी वचन ।

धर्म धीर सों कहा बखानी । मर्दन धर्म नाम मम ज्ञानी ॥
 जब तुम कीन्ह चार का काजा । तातें पुरुष मोहि उपराजा ॥
 मारहुँ तोहि कहौ सतभाऊ । अष्टांगी तैं कामिन खाऊ ॥
 सुनतहि क्रोध धरम पर जरेऊ । जरत हुताश मनहु घृत परेऊ ॥

साखी—करहिं युद्ध बहुभांति सों, कैसेहु क्षमा न होय ॥

क्षण एक लरचौ सहज तुम, करु उपाय अब सोय ॥

चौपाई ।

पुरुष आज्ञा अस भयउ अपारा । मारहु धर्म के मांझ कपारा ॥
 आज्ञा पुरुष ज्ञानी दियो जबही । मारौ शीश परो खस तबही ॥
 संशय भयो तासु की देहा । ताकहँ भयो जी महुँ संदेहा ॥
 धर्म धीर कौ रुधिरसं जबही । विषम सरोवर उपजो तबही ॥
 कन्या निकस जो बाहिर आई । संशय काल तिहिं घटहि समाई ॥
 शीश दियो लै कुर्म के पासा । पुरुष आज्ञा सौं कीन्ह निवासा ॥
 आज्ञा कीन्ही बेग निकारहु । कहै जोइ अब धर्म सिधारहु ॥
 छांडहु अंश खंड का भाऊ । विषम सरोवर माहि सा जाऊ ॥
 देखो बहुत रूप उजियारा । अस कामिनि तैं कीन्ह अहारा ॥
 फिर मैं गयो पुरुष के पासा । धर्म धीर अस करहि तमाशा ॥
 कह कामिनि सुन पुरुष पुराना । म अपना कछु मरम न जाना ॥
 कौन पुरुष मोही उपजाई । सो मोहि गम्य कहौ समुझाई ॥

धर्मराय वचन ।

कन्या मैं उपजायां तोही । रहौ अलख नहिं भेंटसि मोही ॥
 कन्या कह सुन पिता हमारा । खोजो वर होय व्याह हमारा ॥
 बर खोजौ जो दुतिया होई । कन्या म अब व्याहौं तोही ॥
 पुत्री पिता न होवत व्याहा । पितहि पाय बहुतै औगाहा ॥

साखी—धर्म कहै सुन कन्या, भर्म भयो मति तोहि ॥

पाप पुण्य हमरे घरै, क्या डहकसतैं मोहि ॥

चौपाई ।

आदि भवानी औ धर्मराऊ । इन सब कीन्ह सृष्टि निर्माऊ ॥
 पांच तत्त्व तीन गुण रहेऊ । बीज सहित अष्टांगी दएऊ ॥
 चौरासी लक्ष जीव दियो सम्हारी । रचहु सृष्टि अब आदि कुँवारी ॥
 सेवा करहु सृष्टिकी ओरा । अलख निरंजन नाम है मोरा ॥

छन्द ।

कहैं भवानी सुनहु निरंजन यह मन्त्र निज सोई भले ॥
अस करहु कुलफ कपाट दै सब जीव जाहितैं ना चले ॥
दस चार सुत दीजे भयंकर जिहि तैं होय त्रास हो ॥
तिहुँ लोक होत झटा पटा अब चार जुगन निवास हो ॥

सोरठा—चौदह बीर अपार, चित्रगुप्त दुर्गदानी सम ॥
आन देई अहार, सवा लक्ष जिव रात दिन ॥

चौपाई ।

जस कछु मत कियौ आदि भवानी । धरमराय ऐसी मति ठानी ॥
जाइ रहौ जहाँ पाँजी वाँका । धरती शीस सरग का नाका ॥
दशौं दिशा रूंधे सब ठाऊँ । है द्वार मैं कहि समुझाऊँ ॥
गुरु जो कहै औ पन्थ बतावे । ओहि पन्थ हंस घर आवे ॥
धर्मराय मूंदो वह द्वारा । तबहि भवानी युक्ति विचारा ॥
तीनों गुण तिय अण्ड सम्हारा । पुनि भाखौ आगिल व्यवहारा ॥
नाम कहौं कह राखौं गोई । रजगुन तमगुन सतगुन होई ॥
अष्टांगी अण्डन मन दीन्हां । धरमराय कछु उद्यम कीन्हां ॥
मीन रूप जो प्रथम सुभाऊ । ता पीछे कूर्महि निर्माऊ ॥
ता पीछे बाराह को थाना । ता पर उग्र कीन्ह उतपाना ॥

छन्द ।

अस कीन्ह सबहि निरंजना तब दीन्ह मही को थेग हो ॥
महीतल दीन्हा मीन कच्छप सूकर दीन्ह । शेष हो ॥
सुम्मेर पर्वत अति धुरंधर दीन्ह मही जो नाचलै ॥
दशौं दिशा दिग्गज चार दीन्हैं जेहितैं मही ना डग मगै ॥

सोरठा—दीन्हौं मही कौ भार, वारी जगत लगायकै ॥
जाकौ तमहि अपार, चतुर विधाता ठग भये ॥

धर्मदास वचन-चौपाई ।

धर्मदास टेकें गहि पाऊ । नाम जमन कौ मोहि सुनाऊ ॥
चौदह यम मोहि बरनी सुनाओ । दया करहु जिन मोहि दुरावो ॥

साहेब कबीर वचन ।

दुर्ग दाँनी चित्रगुप्त वरियारा । एता जमन के हैं सरदारा ॥
मनसा मल्ल अपरबल मोहा । काल सैन मकरंदी सोहा ॥
चित चञ्चल औ अन्ध अचेता । मृत्यू अन्ध जीतत जो खेता ॥
सूरा संख और कर्म रेखा । भावी तेज तालुका पेखा ॥
अग्नि औ क्रोधित कहिये अन्धा । जामें जीव जन्तु सब बन्धा ॥
परमेश्वर अपरबल धर्मराया । पाप पुण्य सबसौ बिलछाया ॥
ये सब जम जो निरंजन कीन्हा । लिखना कागज रचकै दीन्हा ॥

छन्द ।

चित्रगुप्त लेखौ लगावैं बंधु दोई चतुर भलै ॥
लख चौरासी रसन जाकै लखि लगावत कै छलै ॥
लेखा लगावत जीव कौ जब अवधि पूजै आइ हो ॥
सवा लक्ष प्रमाण बाँध्यो ठग निरंजन राइ हो ॥
सोरठा-ऐसा कीन्ह विचार, वारी जगत लगाय कै ॥
भूल परो संसार, एक नाम जाने बिना ॥

चौपाई ।

देख भयंकर जम की काया । चौरासी लक्ष जिव डरपाया ॥
बिकट रूप देखत जम पासा । सब जीवन भये जो बहु त्रासा ॥
सब मिलि कै तब स्तुति ठाना । सुमरण एकहि आद प्रवाना ॥
यहि बिधि बिनती हँसन ठानी । तबहि भई धर अधरतैं बानी ॥
बानी बिगसत भये उजियारा । जोग संतायन तब पगुधारा ॥
आज्ञा कहा पुरुष मोहे कीजे । करब सोई जो आयासु दोजे ॥

पुरुष वचन ।

हंस दुखित भये काल के पासा । जाइ छुडावहु काल की फाँसा ॥
कहा करौ जो हारो बोला । बरवस करब तौ सुकृत डोला ॥
जोग जीत तुम बेग सिधारो । भव सागर ते हंस उबारो ॥

ज्ञानी वचन ।

चले ज्ञानी तब मस्तक नाई । पहुँचे तहँ जहँ धरम रहाई ॥
धर्मराय ज्ञानी कहँ देखा । क्रोध भयो जनु पावक रेखा ॥
यहँवा आये किहिं व्यवहारा । लोकहिसे मोहि मारि निकारा ॥
मानेव आज्ञा छाँडिब लोका । यही जान परे तुम धोखा ॥
करो संहार सहित तोहे ज्ञानी । मरम हमार तुम कछु न जानी ॥

साखी—संहार करौ पल भीतर, कहौ वचन परचार ॥

पेलौ मान सरोवरै, बिध्वंसौ द्वीप सब झार ॥

चौपाई ।

ज्ञानी कहँ सुन धर्मानि आगर । तो कहँ ठौर दीन्ह भवसागर ॥
तीनौ पुर दीन्हौ तोहि राज । पुरुष आज्ञा आयो धरि पाउँ ॥
चौरासी लक्ष जीव तोहि दीन्हा । तैं जीवन बड सासत कीन्हा ॥
आज्ञा पुरुष करौ परवाना । जीव लोक सब करौ पयाना ॥
पुरुष वचन मेटे फल पावहु । कियो अवज्ञा लोकसो आवहु ॥
सोइ करहु रहन जो पावहु । की यहवाँतै वेग सिधावहु ॥
कै जीवन कहँ दीजे बांटा । बोलहु वचन धर्म तुम छांटा ॥

साखी—धरम कहँ सुन ज्ञानी, आज्ञा पुरुष की सार ॥

सेवा करत रैन दिन, पल पल सहित बिचार ॥

चौपाई ।

आज्ञा मान लीन्ह मैं तोरा । अब सुनिये कछु बिनती मोरा ॥
सो ना करब जो मोर बिगारा । माँगौ वचन करौ प्रतिपारा ॥
पुरुष दीन्हा मोहे राज बुलाई । तुमही देव जो संशय जाई ॥

लीजे हंस जो भक्त परमाना । तीनों जुग हैं मेरे थाना ॥
 चौथा जुग तबही उत्पानी । तबहि सम्हार सुनौ हो ज्ञानी ॥
 कैसे सम्हारो मोहि समझावहु । की भक्ति जो मोहि सुनावहु ॥
 कहैं धर्म सुन जोग संतायन । ऐसे हंस न होय मुक्तायन ॥
 हरि मन्दर में रचो बनाई । तहँवा हंस करत मम नाई ॥
 जो कोइ गम्य न करै बिचारा । सात जन्म लौं चोर हमारा ॥
 सुन ज्ञानी विहँसित मन कीन्हा । कैसा हरि मंदिर का चीन्हा ॥

धर्मराय वचन ।

जब मम कन्या भयो प्रसंगा । मनमथ उपज्यौ भयो उमंगा ॥
 चलयौ रुधिर कामिन के जबही । नख रेखा भग उपजी तबही ॥
 चलयौ रुधिर ताको रज भएऊ । गर्भ प्रसंग अंड तिय ठएऊ ॥
 तेहि प्रसंग तिय गुण उपराजा । तबतैं अधर निरंजन राजा ॥

सखी-ज्ञानी कहैं धर्म सो, यह छल मतौ तुम्हार ॥

जाको मैं चेतावहूँ, सो तुमहीं सों न्यार ॥

चौपाई ।

बिनती तोर करों प्रतिपाला । जुग तीनों जीवन बर साला ॥
 चौथा जुग अंश मम आवहि । नाम प्रताप हंस मुक्तावहि ॥

धर्मराय वचन ।

हे स्वामी बर आयसु होई । कछु मांगों अब दीजे सोई ॥
 सो न करब जो सब जिव जाई । भवसागर खाली परजाई ॥
 ऐसा मत ज्ञानी तुम ठानहु । आज्ञा पुरुष की तुमहु मानहु ॥
 पुरुष बोल हारा मोहि पाहीं । सो न करब जो सब जिव जाहीं ॥
 कह ज्ञानी सब मैं माना । कह्यौ बचन सो करब प्रमानी ॥
 सतजुग त्रेता द्वापर जाई । कलियुग कौ प्रभाव जब आई ॥
 चार अंश मैं कीन्हौ थाना । खूंट गहौ तो नहीं प्रनामा ॥

धर्मराय वचन ।

साखी-बाँवन नरसिंह अंश मम, परसराम बलबीर ॥

रामचंद्र आगे करौ, तब पुनि कृष्ण शरीर ॥

चौपाई ।

कृष्ण देह छाँडब मैं जहियाँ । कलियुग चौथा युग होय तहियाँ ॥
तब हम करिहैं बौद्ध शरीरा । जगन्नाथ सरोवर के तीरा ॥
राजा इन्द्र दवन परवाँना । मंडप काम लगावैं तवाँना ॥
मंडप तास उठन नहिं पाई । सायर उमंग खसावन आई ॥
तब ज्ञानी पूछैं यह बाता । तोहि ते उपजै सायर साता ॥
जगन्नाथ तै कष्ट बनाई । सायर कवनहुं भाँति खसाई ॥
हँस्यो धर्म कहि सतौ अपाना । कहौ करतूत सुनौ परिवाना ॥
दैत्य अनेक जीव जो मारौ । अंश मोर तेहि जाय सहारौ ॥
राम रूप जब होय हमारा । तिनसौ होइ है द्रोह अपकारा ॥
दैत्य अनेक जीव को फेरा । वालि बधे औ सायर तेरा ॥
वालि बैर मैं तुरत दिवायव । व्यादि फाँसी सो कृष्ण मरायव ॥

साखी-सायर बैर ना पावई, करि है वाऊ सौं घात ॥

मंडप उठन न पाइ है, जातैं कहौ अस बात ॥

चौपाई ।

हे ज्ञानी अस मतौ बिचारहु । प्रथमहि सागर तीर सिधारहु ॥
मोहिं थापहु मैं करहुं निहोरा । तातैं भाव जरै नहिं मोरा ॥
मण्डप उठे अटल होय राजू । पुरुष वचन कहैं तुम कहैं लाजू ॥
पहिले थापहु मो कहैं ज्ञानी । सागर तार बैठहु अन्तर्यामी ॥
कहैं जोग जीत सुनां धर्मराई । पुरुष बोल मेंटा नहिं जाई ॥
सतजुग त्रेता द्वापर माहीं । तीनों जुग अंश मोर जहैं जाहीं ॥
कोइ कुल इंस शब्द जो पावई । तीनों जुग जीव थोरा आवई ॥
कलियुग मोर मनुष्य शरीरा । जा कहैं सुनियों नाम कबीरा ॥

जो जिव नाम शरण गति आवै । होय निशंक लोक कहँ जावै ॥
 और इकोतर नामहि पावै । तुम कह जीत हंस घर आवै ॥
 माँग्यो वचन करौं प्रतिपाला । जुग तीनों जीवन वरशाला ॥
 जातैं पुरुष बचन अब हारा । करौ सो बचनन कौ प्रतिपारा ॥

साखी-जगन्नाथ मैं थापब, जायब सागर तीर ॥

हंस लोक लै आएब, देह जब धरब कबीर ॥

चौपाई ।

यहि प्रकार आयो ज्ञानी जबहीं । मारयो तुरत बांधक तबहां ॥
 कियो अवज्ञा गरस्यो नारी । मान सरोवर तै मार निकारी ॥

धर्मराय वचन ।

हे स्वामी मैं कहौं विचारी । रोकौ न हंस जो शरण तुम्हारी ॥
 जो कोई जीव जो होय तुम्हारा । अपने कांध उतारौं पारा ॥

साखी-यह चरित्र सब ज्ञानी, कीन्ह धरम के पास ॥

जाय कह्यो तब पुरुष सौं, मुख सागर कीन्ह निवास ॥

चौपाई ।

अभैपक्ष ज्ञानकी कौ द्वीपा । तहाँ सत्ताईस द्वीप समीपा ॥
 तहँकी काल खबर नहिं पाई । तहँ न सतादै काल अन्याई ॥

धर्मदास वचन ।

धरमदास तब कीन्ह प्रमाना । अगम अपार सुनै यह ज्ञाना ॥
 हे स्वामी यह कहौ बुझाई । कौन मते अब सृष्टि बनाई ॥
 सो विरतंत कहौ समुझाई । जिहिं तैं मन की संशय जाई ॥
 तुम्हरे वचन मोहि सार गुसाई । सुन हर्षब धनरंक की नाई ॥

साहेब कबीर वचन ।

कहैं कबीर सुनौ धर्मदासा । जस कन्या कछु कीन्ह तमाशा ॥
 तीनों अण्ड भये तिय वारा । ताके रूप भये अधिकारा ॥

रजगुन भाव ब्रह्मा उत्तपानी । सत्तगुन भाव विष्णु को जानी ॥
 तमगुन भाव रुद्र का लेखा । तीनों गुन तिय अंड विशेषा ॥
 जब देवी तिन सुत उत्तपानै । धरमराय निद्रा अलसानै ॥
 सोवत चार युग गय बीती । इक युग प्रथम अंड सौ प्रीती ॥
 उठि जागै कोइ जान न भेदा । ताकी स्वांस तैं चारों वेदा ॥
 स्तुति वेद कियो पुनि तहँवा । चतुर रूप विधाता जहँवा ॥
 मीन रूप जो कीन्ह बनाई । तीन छोडि रह चौथे ठाई ॥
 जो तुम संशय करहु धर्मदासा । वेद चरित्र अब कहौ प्रकाशा ॥
 कूर्म घाव कियो काल अन्याई । बुंद प्रसेद तहाँ पुनि पाई ॥
 एक बुंद धरती परगासा । दूसर बुंद घट माहिं निवासा ॥
 बुंद प्रभाव वेद भये ताही । ऐसे बुंद की उत्तपति आही ॥
 और चरित्र जस कीन्ह भवानी । सो अब तुमसौं कहौ बखानी ॥

साखी-तीन देव जब ऊपजे, ब्रह्मा विष्णु महेश ॥

कर जोरे स्तुति करें, तैं अब कहौ संदेश ॥

आज्ञा कह मोहि माता, सोइ कहौ समझाइ ॥

सोई करब हम निहचै, बोले तीनौ राइ ॥

ब्रह्मा करहु तुम सृष्टि उरेहा । जातैं जीव धरैं सब देहा ॥
 कैसे करहि सो युक्ति बतावहु । क्रिया करहु जनि मोहि दुरावहु ॥
 सत्तगुन पहिले भयो उत्तपानी । सैतिस कोटी देव बखानी ॥
 रजगुन तमगुन अंड जो भयऊ । दैत्य अनेक तबहि निरमयऊ ॥
 दैत्य देव सौं हांय सग्रामा । जो मैं कहौ करब सो कामा ॥
 जाय खनावहु सागर साता । जातैं दैत्य न करैं उत्तपाता ॥
 सागर नीर करौ उत्तपानी । जाते दैत्य गति रहै भुलानी ॥
 रचौ सिन्धु जल होय अपारा । तब कहि दौं आगिल व्याहारा ॥

चख्यो ब्रह्मा मातहिं सिरनाई । सोच रझ्यो कस करब उपाई ॥
 बहुतक जने परिश्रम कीन्हा । चलो प्रस्वेद सोई पशु चीन्हा ॥
 साठ सहस्र बुंद अनुसारी । बुंद प्रभाव सबै नख धारी ॥
 नख धारिन स्तुति अनुसारा । कहा करै सुन पिता हमारा ॥

ब्रह्मा वचन ।

साखी-खनहु सिन्धु मम बचन इम, मंत्र कहौ समुझाय ॥

माटी उठे जु खनत महुँ, ता कहँ घालिब खाय ॥

चौपाई ।

चतुर रूप कीन्हा तिन चारी । कहौ नार सबते अधिकारी ॥
 रचो सिन्धु कछु लागि न बारा । सागर सात रच्यो विस्तारा ॥
 सागर नीर जब भयो प्रकाशा । नख धारिन तब काल गरासा ॥
 सायर रचि ब्रह्मा अनुरागा । अडसठ तीरथ रचन तब लागा ॥

साखी-गंगा यमुना सरस्वती, गोदावरी समान ॥

रची नदी तब गंडकी, जहँ तहँ शिल उतपान ॥

चौपाई ।

सालिग्राम गंडक अंकूला । पांहन पूजत पंडित भूला ॥
 और नर्मदा नदी गोदावरी । सोनभद्र पुनि करम नासावरी ॥
 और अनेक रच्यो विस्तारा । जाते भूल परचो संसारा ॥
 सिन्धु सम्हार गये देवी ठाँऊ । चतुर मुख आन गहे तब पाऊँ ॥
 हे माता आज्ञा तुम मानी । रच्यो सिन्धु तुव बचन प्रवानी ॥

भवानी वचन ।

मथौ सिन्धु सुत कहा हमारा । वहि में पैहो कामिनि वारा ॥
 तीनों जनै चले सिर नाई । मथन सिन्धु कस करब उपाई ॥
 पर्वत आनि मथनियां कीन्हा । फनपति लेइ फाहरी दीन्हा ॥
 मथतहि सिन्धु मतौ अस कीन्हा । आपन अँश उतपानहिं लीन्हा ॥

अंश बारि महुँ पाये जबहीं । कन्या तीन उत्पन्न भई तबहीं ॥
पाय कन्या तब भये आनन्दा । देवी पास चले तिय संगी ॥
लै कन्या तब आगे कीन्हा । कर जोरें प्रणाम मन दीन्हा ॥

साखी—हे माता यह कन्या, पायो सिन्धु मझार ॥

जस कछु आज्ञा कीजिये, तस कछु करब बिचार ॥

भवानी वचन—चौपाई ।

कहे भवानि सुन ब्रह्म कुवाँरा । कामिनि के तुम सदा भरतारा ॥
सावित्री ब्रह्मा कहँ दीन्हा । लक्ष्मी कृपा विष्णु पर कीन्हा ॥
पारवती रहि संकर पाहीं । अटल अहिबात करचो भव माहीं ॥
पायो कामिन भयो हुलासा । बहुरि विनय कियो देवी पासा ॥
हे माता तुव आज्ञा सारा । जो कछु कहौ सो करौ बिचारा ॥
कहे भवानि सुन ब्रह्म कुवाँरा । जाइ मथो अब सायर खारा ॥
पइहा वस्तु सो आनहु जानी । अस कछु बोली आदि भवानी ॥
चले देव त्रिय लाग न वारा । मथ्यो सिन्धु करि हर्ष अपारा ॥
पाये वेद ब्रह्मा सो लीन्हा । विष्णु भाव सो हम हू चीन्हा ॥

साखी—चार वेद ब्रह्मा लिया, अमृत विष्णु सम्हार ॥

मथे अनिल जो विष भया, सो लीन्हा त्रिपुरार ॥

चौपाई ।

यह चरित्र त्रय देव बनाया । यहि सुधि दैत्य सुनै जब पाया ॥
आइ कीन्ह सब बाद बिबादा । पायहु वस्तु देहु मोहिं आधा ॥
बेद अनिल बिष सब तुम लेहू । सुधा आहि सो हम कहँ देहू ॥
कहँ विष्णु सुन दैत्य अधीरा । सदा खाइकर विपति शरीरा ॥
दोनों मिल अस कीन्ह विचारा । सब मिल खईये अमृत सारा ॥
दोई पाति बैठे भल जोरी । दैत्य देव तेतीस करोरी ॥
विष्णु चरित काहू नहिं जाना । वांटन अमृत छुछ जो ठाना ॥

साखी-देवन अमृत पानयौ, काहु न कीन्ह प्रसाद ॥

बाँटत राहु तब ग्रस्यो, चन्द्र भानु कियो बाद ॥

चौपाई ।

जब सब मिलिकै आयसु पाई । सभा बैठ कैसे कै खाई ॥
 सुनकै विष्णु क्रोध तब कीन्हा । चक्रमार राहु सिर छीना ॥
 अमृत परयो ताहि के पेटा । शीस के राहु देह सो केता ॥
 भयौ युद्ध दोनों दल भारी । बहुतदिन लरे जो बैर सम्हारी ॥
 चन्द्र भानु जो राहु मुरावा । ग्रसै जान बैर को भावा ॥
 यह चरित्र भयो सागर तीरा । देवी पास चले त्रय वीरा ॥
 तब देवी अस मतौ बिचारा । रचहु सृष्टि जग होइ उजियारा ॥
 अंडज माता किया उत्पानी । पिंडज भाव ब्रह्मा को जानी ॥
 ऊष्मज विष्णु कीन्ह व्यवहारा । शिव कीन्हौ रोम अठासी धारा ॥
 लख चौरासी योनिन कीन्हा । आधा जल आधा थल दीन्हा ॥

साखी-जलके जीव पताल सब, औ पृथिवी परचंड ॥

रखो अहार शंभू सबै, बनस्पती कौ अंग ॥

चौपाई ।

स्थावर महेश जो कीन्हा । उष्मज दोइ तत्त्व कर चीन्हा ॥
 तीन तत्त्व अंडज में दीन्हा । चार तत्त्व पिंडज को कीन्हा ॥
 मुक्ति क्षेत्र नर कौ अवतारा । ता महं पांच तत्त्व हैं सारा ॥
 और जो इन में बरतै भाऊ । मनुष्य जन्म में प्रगट स्वभाऊ ॥
 मनुष्य जन्म उत्तम सो होई । विना नाम पुनि जाइ बिगोई ॥
 स्वासा सार तै बेद जो भएऊ । सो पुनि मीन पास लै धरेऊ ॥
 एकहि सुरति तब ब्रह्मा पावा । तेहि पढिबे का मन चितलावा ॥
 वेद पढत बूझ अस परेऊ । पृथ्वी अकाश जोत अनुसरेऊ ॥

साखी-निराकार निरंजन, सृष्टि कीन्ह उत्पान ॥

मैं जानौं भल मरम अब, नहिं कीन्ह्यो आदि भवान ॥

चौपाई ।

चल ब्रह्मा माता पर आयें । दोई कर जोरकै बिनती लाये ॥
हे माता मैं पूछौं तोहीं । जो पूछौं सो कहिये मोहीं ॥
कौन पुरुष मुहि कीन्ह प्रकाशा । सो सब मातु कहौ मोहि पासा ॥
कहे भवानि सुनु ब्रह्म कुवाँरा । पृथ्वी अकाश मैं ही अनुसारा ॥
मैं कीन्हा दुतिया नहिं कोऊ । तुम कस भूले सो कहु भेऊ ॥
हे माता मैं बेद विचारा । है कोई शून्य में सिरजन हारा ॥
निरंकार निरंजन राया । ज्योति अपार श्रुति गुण गाया ॥
साधु २ कहि आदि भवानी । आदि पुरुष जिहि तैं उत्पानी ॥
कहाँ अहै सो मोहि बताओ । कृपा करो जिन मोहि दुराओ ॥
साखी-चरण सप्त पाताल हैं, सात स्वर्ग हैं माथ ॥

पुहुप लेकर परसौ, जामें होहु सनाथ ॥

चौपाई ।

चले ब्रह्म मातहि शिरनाई । उत्तर पन्थ सुमेरुहि जाई ॥
जाइ ठाढ भये तिहिं अस्थाना । शून्य आदजहाँ शशि नहिं भाना ॥
बहु विधि स्तुति ब्रह्म करई । ज्योति प्रभाव ध्यान अस धरई ॥
दुखित सुख जो भई तुझारी । स्तुति करत भये जुग चारी ॥
यह विधि बहुत दिवस चलि गएऊ । अदि भवानी मन चित ठएऊ ॥
जेठा पुत्र जो ब्रह्म कुवाँरा । कहाँ गयो वह पुत्र हमारा ॥
साखी-अब मैं करब उपाय सो, जिहि तैं ब्रह्मा आय ॥

गायत्री उत्पानऊ, ताहि कही समुझाय ॥

चौपाई ।

ब्रह्मा गये पिता के ठाई । पिता दरश अजहुँ नहिं पाई ॥
बहुत दिवस भये बेग लै आबहु । बहुत भांति कर तिहि समझावहु ॥
चली गायत्री ब्रह्मा पासा । तिनसौं जाइकर बचन प्रकाशा ॥

पुहुप लैकर दरशन आएहु । पिता दरश अजहूं नहिं पाएहु ॥
ब्रह्मा कहै कवन तैं आही । मोर मरम पाये किहि पाही ॥

गायत्री वचन ।

आदि भवानि मोहि उपजाई । तुमहि लैन को यहां पठाई ॥
चलहु बेगि जिन लावहु बारा । तुम बिन सृष्टि न हो अनुसारा ॥
कहे ब्रह्मा कैसे मैं जाऊँ । पिता दरश अजहूं नहिं पाऊँ ॥
एक उपाय चलो सुनु बाता । तो कहूँ बात पूछि है माता ॥
मोरे हित कह झूठ स्वभाऊ । तौ तुव संग अब धारों पाऊ ॥
गायत्री कहूँ आयसु होई । पुन परमार्थ है बड सोई ॥

साखी-चलु ब्रह्मा माता पर, होवै सृष्टि उपाय ॥

झूठ वचन मैं भाषिकै, जाय सुनाइब माय ॥

चौपाई ।

चलि गायत्री ब्रह्मा साथी । माता प्रेम सों चूम्यो माथा ॥
कुशल प्रभाव सों चूम्यो शीसा । और मातु दियो बहुत अशीसा ॥
कैसे भयो तहां तोहि भाऊ । सो सब ब्रह्मा मोहि सुनाऊ ॥
ब्रह्मा कहै सुनौ हो माता । यह पूछौ गायत्री बाता ॥
गायत्रीहि आज्ञा भई जबही । अचरज बात कही कछु तबही ॥
परस पुहुप लै पितु ही माथा । देखो सब रही मैं साथी ॥
आदि भवानी बहुत बिहँसानी । दोई झूठ कही सहिदानी ॥
ज्येष्ठ पुत्र मम ब्रह्म कुंवारा । बहुत झूठ तिन वचन उचारा ॥
ब्रह्महि शाप दियो तब जानी । होहु अपूज्य कहि आदि भवानी ॥
औ कमलकेतकी अस अविश्वासा । निरघिन ठौर तोर होइ वासा ॥
गायत्री होई वृद्ध भरतारा । पांच सात औ बहुत पसारा ॥

साखी-शाप्यो ब्रह्मा गायत्री, फिर पाछे पछताय ॥

क्रोध क्षमा नहिं कीन्हैऊ, अब कस करे निरंजन राय ॥

चौपाई ।

ततक्षण भई अकाश तैं वानी । नहिं भल कीन्हौ आदि भवानी ॥
 ऊँच होइ जो नीच सतावै । ताकर बैर मोहि सन पावै ॥
 लेहुँ बैर सुन कहा हमारा । तोरे होइ हैं पञ्च भर्तारा ॥
 सतयुग त्रेता जैहैं जबही । द्वापर को प्रभाव होय तबही ॥
 राजा द्रुपद घर तो अवतारा । द्रौपदी नाम तोर उजियारा ॥
 पांडव होइ हैं कंत तुम्हारा । निश्चय मानहु कहा हमारा ॥
 शाप बैर देवी जब पावा । सोच करै मन में पछतावा ॥

साखी-सोच करा कह अब मैं, दुर्ग निरंजन राइ ॥

आइ परी बस अधम के, विष्णुहि देखौ जाइ ॥

चौपाई ।

सुनहु विष्णु तुम कहा हमारा । बैर गमन कर सत पताला ॥
 जाय पिता कर परहू पाऊँ । सो सब विष्णु तोहि समुझाऊँ ॥
 अच्छत पूजा लियो कर जोरी । पताल पंथ की अगम है डोरी ॥
 चलत जात कछु अं न पावा । शेष नाग विष गरल स्वभावा ॥
 विष के तेज विष्णु कुम्हलाना । येहि चरित्र निरंजन जाना ॥
 स्वान शरीर भय विषके ज्वाला । भइ अकाश बाणी तत् काला ॥
 सुनहु विष्णु तुम कहा हमारा । विषम पंथ है सत पतारा ॥
 प्रथम पतालको है अस ज्वाला । आगे होइ तोर जिव काला ॥

साखी-फिरयो विष्णु परमान इमि, कह जो दियो समुझाय ॥

मध्य पंथ है दारुन, कैसे परसौ पाय ॥

चौपाई ।

गरल भाव उर स्यामल अंगा । ताकर बैर कहौ परसंगा ॥
 जो को करै जीव वरियाई । दुर्ग राइ तिहि बैर दिवाई ॥
 सतयुग त्रेता गत हो जबही । द्वापर को प्रभाव हो तबही ॥

विष्णु भाव पुनि कृष्ण शरीरा । नाथहि काल कालिन्दी तीरा ॥
 जो कछु विष्णु पतालहि सुना । देवी पास कहौ सतगुना ॥
 सुनकर देवी बिहँसत भएउ । विष्णु अशीश बहुत्त कै बिएऊ ॥
 सत्य बचन तें भयौ हुलासा । लेउ अशीश विष्णु कोहि पासा ॥
 जहँ लग जीव जंतु उतपानी । सब परविष्णु तुमहि परमानी ॥
 तीनों पुर में आन तुम्हारी । बचन मोर सुनु सत्य सुरारी ॥
 साखी-यह चरित्र कर देवी, चली जो शिव के पास ॥
 कर जोरे स्तुति करै, कीन्हौ बहुत हुलास ॥

चौपाई ।

दोइ पुत्र को मतौ सुनावा । मांगु महादेव तुम मन भावा ॥
 मांगौ सो जो कीजो दाया । यह नहिं बिनसै हमरी काया ॥
 वैसे होहु सुनो हो वारा । साधौ जोग जो मतौ अपारा ॥
 जब लग पृथ्वी अकाश पतारा । तब लग काया न बिनसै तुम्हारा ॥
 ब्रह्मा विष्णु तजै शरीरा । तैंतिस कोट देव रनधीरा ॥
 जब लग चंद्र सूर्य औतारा । बिनसै न देह सुनु कदा हमारा ॥
 तीनों पुत्र को कीन्ह सन्माना । तब माता अस आज्ञा ठाना ॥
 रचौ सृष्टि तुम तीनों भाई । प्रथमहि कैसे युक्ति बनाई ॥
 नर नारी कीन्हो दोइ देहा । तातें उपज्यो मदन सनेहा ॥
 दश द्वारा सुर नर मुनि कीन्हा । धरती भार भए अकुलीन्हा ॥
 साखी-दशौ दिशा तब निरमयो, भयो मनुष्य अपार ॥
 पृथ्वी भई तब व्याकुल, सहि न सकै अस भार ॥

चौपाई ।

गौ रूप हो बसुधा गयऊ । विष्णु स्थान ठाढ पुनि भयऊ ॥
 हे स्वामी भयो मनुष्य अपारा । मोर अंग बल सहि न सम्हारा ॥
 चलत मंथ नहिं भूमि अडाही । माथे पर लै हाथ चढाही ॥
 सुनकै विष्णु समाध लगावा । निरंकार सौं अस्तुति लावा ॥

अहो पुरुष कल करव उपाई । पृथ्वी भार बहुत अकुलाई ॥
तत्क्षण भई अकाश ते बाणी । सुनहु विष्णु कर सबकी दानी ॥
शिव विद्याय चौदह सुत मोरा । इनैं छांडकर शंकर ओरा ॥

साखी-जाहु पृथ्वी घर आपने, करौं चरित अब सोय ॥

भार उतारो मही को, आज्ञा अस जो होय ॥

चौपाई ।

चली आय वसुधा निज गेहा । जमन विष्णु तब कीन्ह सनेहा ॥
मारहु जारहु अब जिव जन्तू । सुन अन्तक सुन भयो अनंतू ॥
आई पावक तब रखना लीन्हा । सब जिव मार विष्णु कह दीन्हा ॥
मारे देव तैतीस कसोरी । ब्रह्मा मार मही सब घोरी ॥
कीन्हो युग निकंद भयो जबही । जुग निकंद विष्णु कियो तबही ॥
सब जीव घाल आप में लीन्हा । प्रथम स्वभाव जमन तब कीन्हा ॥

साखी-सवा लक्ष जीव विष्णु ते, चले जात नित नेम ॥

जस अनाज की कोठरी, करि कृषानु बहु प्रेम ॥

चौपाई ।

ले अनाज कोठी वहरावै । खरच लेइ पुन फेर मुदावै ॥
अस चरित्र कियो अन्त कराऊ । अब कछु भाखौं अगिल स्वभाऊ ॥
विष्णुहि सैं सतभाव जो देखा । छांडों अंश करौ सृष्टि उरेहा ॥
सतगुण भाव विष्णु कौ जानी । नाभि कमल ब्रह्मा उत्पानी ॥
तत्क्षण ब्रह्मा गयो अकाशा । विष्णु ध्यान अस बचन प्रकाशा ॥
येहो स्वामि निरंजन राया । वसुधा कैसे करौ उषाया ॥
बारी सहित मही जो बोरी । प्रगट करन की युक्ति है थोरी ॥
रजगुन भयो जो ब्रह्मा निवासा । ताकी नाभि से पवन प्रकाशा ॥
तीनों गुन तिय अंड जो भएऊ । दैत्य देह तिन दांनों धरेऊ ॥
उठि ठाढ़े नहिं पावहिं थाहा । गये जहां तहुँ प्रभु अवगाहा ॥

कराहिं युद्ध बहु भुजा पसारी । वे दोई बांह विष्णु भुजचारी ॥
 बहुतक दिवस युद्ध जो कीन्हा । तिन पुनि ऐसो बोलहि लीन्हा ॥
 मांगहु विष्णु देव मोहि सोई । मैं भय छल भाखौ अब सोई ॥
 मधु कैटभ तुम दैत्य अपारा । अवश्य होहु तुम वंध्य हमारा ॥
 होउ वंधु जहँवा जल नाहीं । दोनों गये विष्णु के ठाहीं ॥
 यहै चरित्र विधाता कीन्हा । तेजय जल सब सिंधु महीं दीन्हा ॥
 तबहि कियो पुन सप्त पतारा । मीन रूप वसुधा अनुसारा ॥
 तेजय जल सब सिंधुमें दएऊ । उनचास कोट मेदनी ठएऊ ॥

साखी—तहां बैठ जो दैवत, जब भयो पृथ्वि प्रचार ॥

तीन देव विन्तीकरैं, कीजै सृष्टि विचार ॥

चौपाई ।

प्रथमाहिं सतयुग कीन्हौ थाना । कीन्हौ जीव जन्तु उत्पाना ॥
 सत्यदेह पुनि भयल कुमारी । यह प्रकार रचना अनुसारी ॥
 बडवा नाल अग्नि परकाशा । सो तीनों पुर कीन्ह निवासा ॥
 कीन्ह्यौ ऋषि सब सहस्र अठासी । नौई नाथ सिद्ध चौरासी ॥
 कीन्ह्यौ देव प्रथम परगाशा । ये सब कीन्हें अपने आशा ॥
 और अनेक राजा सब कीन्हा । यह चरित्र काहु नहिं चीन्हा ॥
 यहि कारण माराहिं उपजावहिं । आप स्वार्थी जीव हतावहिं ॥

छन्द ।

नहिं बूझ परत अपार महिमा सुरत ऐसी बिध कियो ॥

बाज लगावहिं भावहु सब जीव जम के वश रह्यो ॥

तुम बूझि देखो चरित्र वाको जन न कोई बूझई ॥

सेवा करत सब स्तुति यम जीव को अटकावई ॥

सोरठा—सुनु धर्मदास सुजान, नाम गहौ चितलाय कै ॥

शब्द गहौ परवान, विना नाम नहिं मुक्ति फल ॥

धर्मदास वचन-चौपाइ ।

धर्मदास विन्ती अनुसारी । हे स्वामी तुम्हरी बलि हारी ॥
अब मैं पायो भेद तुम्हारा । मोर मनोरथ करौ प्रतिपारा ॥
पृथ्वी केर चरित्र सुनावहु । जन्म जन्म के भाव बतावहु ॥
जग समीप हरि को विस्तारा । तुम कछु स्वामी अगम विचारा ॥
आदि अंत बूझौ प्रभु राया । अब गुरु कहौ गहौं तुव पाया ॥

साहिव कबीर वचन ।

सुन धर्मन मैं तोहि बुझाऊँ । हरि चरित्र सब तोहि सुनाऊँ ॥
दैत्य महा बलि भये अपारा । यज्ञ अश्वमेध कीन्ह विस्तारा ॥

बलि चरित्र ।

बलि भयो दानी महा प्रचंडा । स्वर्ग पताल मही नौ खंडा ॥
जो जांचैं तिहि देय तुरन्ता । जांचय फिर आवै हरन्ता ॥

छन्द ।

जाचक भयो जो धनी बहुविधि दीन्ह नहिं कोई जगरह्यो ॥

पाई मुक्ति बर अवरार्थ्यो दैत्य ऐसो वृत्त गह्यो ॥

शुक्र मंत्री मंत्र ठान्यो अश्वमेध यज्ञ जो कीजिये ॥

मुक्ति बर पावै नहीं तो स्वर्ग बरबस लीजिये ॥

सोरठा-अश्वमेध रचि राज, जान महाफल मुक्ति कर ॥

करब स्वर्ग कर राज, इन्द्र करब बस आपने ॥

चौपाई ।

जानी तीन लोक के भूपा । तब पुनि कीन्हो बावन रूपा ॥

तौन रूप धरि गये पताला । जहँवाँ बल राची यज्ञ शाला ॥

प्रतिहारै तब बात जनाई । है दुज ठाढ सुनौ बलराई ॥

महा पंडित मुख वेद उच्चार । आज्ञा कहा सो कहौ भुवारा ॥

सुनतहि बलि अब धरे उपाऊ । अर्घ पाबडे कीन्ह बनाऊ ॥

नमस्कार कर पूछी बाता । आज्ञा कहा सुनौ तुम दाता ॥
 माँगों सो मोहि दीजै राऊ । दानी सुन आएउ तोहि ठाऊ ॥
 मोहि देव माँगों जो स्वामी । महा पंडित तुम अन्तर्यामी ॥

छंद ।

परनकुटी छावन चहैं महि देव तुम बलराई हो ॥
 पग तीन माँगों नापतै जामैं होय अटाव हो ॥
 सुनि विहँसे बलिराय तबहीं अहो विप्र माँगौ कहा ॥
 हीरा रत्न भानिक पदार्थ छांड महिमें क्या रहा ॥
 सोरठाँ-माँगौ थोरा दान, यही रुचि मोहि सुन नृपति ॥
 प्रथम वचन परमान, तृणा स्वारथ निधि कहौ ॥

चौपाई ।

शुक मंत्रि सुन शीश डुलावा । हे नृप दान मोहि नहिं भावा ॥
 राजा सुनत क्रोध तब कीन्हा । बूझि बोल मंत्री मतिहीना ॥
 लीन्हा नृपति हाथ कुशपानी । कीन्ह संकल्प मही दियौ दानी ॥
 मानहु विप्र बचन परवाना । लेव तहां जहँवाँ मन माना ॥
 तीनों पुर तीनों पग कीन्हा । प्रगटे हरि तब सबहिन चीन्हा ॥
 देव पूरा नृप आधा पाऊँ । नातर जाय पुण्य परभाऊ ॥
 लेव नापि प्रभु पीठ हमारी । तातैं विष्णु वाक्य मैं हारी ॥

छन्द ।

नाप दीन्ही पीठ अपनी बलि नृपति बड राइहौ ॥
 बाचा व्रत में बांधि राख्यो लक्ष्मता पैठाय हो ॥
 विश्वास दीन्हा मुक्ति कौ भरमाई राख्यो तेहि हो ॥
 यही भाति प्रपंच कीन्ह्यो तपी सिद्ध सबहि हो ॥
 सोरठा-बूझो संत सुजान, हरि दीन्हा जस मुक्ति फल ॥
 पछतइहो अंत निदान, एक नाम जानै बिना ॥

सनक सनंदन चरित्र ।

चौपाई ।

सनक सनंदन चले हरषाई । पुर बैकुंठ सुमेर पर जाई ॥
जय रु बिजय दोइ रहैं प्रतिहारा । रोकि न तेहि न दीन पैठारा ॥
सुनिकै क्रोध ऋषी तब कीन्हा । जय रु बिजय कहैं शाप जो दीन्हा ॥
होऊ दैत्य तुम दोनों भाई । जाई रहो मृत्यु मंडल ठाई ॥
सुनिकै शाप दोनों गए जहँवां । हरि बैठे लक्ष्मी सँग तहँवां ॥
कहि न जाइतिहि ऋषिकर भाऊ । सुनकर विष्णु कीन्ह पछताऊ ॥
योरी चूक शाप बड दीन्हा । नहिं भल कीन्ह अवज्ञा कीन्हा ॥
ऋषिन बुलाय कही अस बाता । है परभाव वैर कर घाता ॥

साखी—जय रु विजय कहैं शापेऊ, होहू दैत्य प्रभाव ॥

ताको सुत तुम होहु अब, शाप को बदलौ पाव ॥

चौपाई ।

अब स्वामी तुम बचन प्रमाना । मो कहैं देव भक्ति भगवाना ॥
जय अरु बिजय काल बश भयेऊ । तिन को जन्म मनुष्यहि ठएऊ ॥
हिरनाकुश वा हिरनाक्ष राऊ । कीन्हा सेवा बहु शंभू ठाऊ ॥
पा बरदान भये बलवंता । नहिं कोई देव यक्ष गुणवंता ॥
सोई आन पुनि कीन्ह संग्रामा । भाजे देव छांडि सब धामा ॥

साखी—तब प्रपंच हरि कीन्हा, अस ठाना व्यवहार ॥

ताकी नार औधान रहि, भयो पुत्र अवतार ॥

चौपाई ।

हिरनाकुश जब भये हरषंता । चले असुर घर जन्मो पूता ॥
सेवकन दीन्हें रतन पदराथ । शिव सुत दीन्ह जन्म मम स्वारथ ॥
वर्ष पांच को भयो जो बारा । गुरु बुलाय पढने बैठारा ॥
शिव की भक्ति तुम याहि पढावहु । माँगहु इच्छा सो फल पावहु ॥
लै घर विप्र गये तब वारा । पढौ सु सुत शिव भक्ति बिचारा ॥
प्रह्लाद शिवकी भक्ति जो धरहुं । हरषे नृप मम बिथा बिसरहुं ॥

साखी-केतौ गुरु प्रबोधै , शिव न पढै प्रह्लाद ॥

विष्णु २ गुहरावई, सुन गुरु करै विषाद ॥

चौपाई ।

एक वार नृप सभा मझारी । बैठे सुत कहँ कीन्ह गुहारी ॥
गये प्रतिहार ले आए बारा । गुरु समीप पढने बैठरा ॥
इर्षत चूम्या सुत को शीसा । सकल सभा दियो बहुत अशीसा ॥
सुत मोहि कछु पाठ सुनावहु । कहौ बचन मम हृदय जुडावहु ॥
तब प्रह्लाद पढन अनुसारा । धन्य विष्णुजिन काय सम्हारा ॥
पानी तैं जिन पिण्ड बनवा । तिहि प्रभु को कोइ अंत न पावा ॥
अलख निरंजन देव मुरारी । सुनौ तात मैं तुव बलिहारी ॥
सुनत वचन हिरनाकुश राज । क्रोध कीन्ह जस अग्नि स्वभाज ॥

साखी-अहो मंद जड अकरमी, किमि ठानो मम बार ॥

जाई पढावहु शंकर, नातर शोको भार ॥

चौपाई ।

दिनदशमें पढाइ लैआवहु । शिव कि भक्ति भली भांति सिखावहु ॥
नृप आज्ञा पढवे को दीन्हा । तब प्रह्लाद पढे अस लीन्हा ॥
हरि तज काहि पढौ मैं ताता । चार पदारथ के फल दाता ॥
भक्ति पक्ष सन्तन सुखदाई । जिन प्रभु सकल सृष्टि उपजाई ॥
तब नृप सुन अस वचन उचारा । मारहु सुत यह शत्रु हमारा ॥
इस्ति बुलाए अति बलवंता । चलत छांदि भुव देइ पदंता ॥
ता कहँ आज्ञा दीन्ह भुवारा । देव महाबल आंकुश भारा ॥
साखी-हस्ति देख प्रह्लाद कह, चलै पराइ पराय ॥

नरसिंह रूप दिखराय हरि, भक्ति करत मन लाय ॥

चौपाई ।

तब नृप ऐसी युक्ति बिचारी । जरत अग्नि देव सुत कहँ डारी ॥
अग्नि जरत तब पवन उडानी । प्रह्लाद पढै तब सारंग पानी ॥

तब नृप ऐसी युक्ति अरंभा । बांधो सुत कहँ गाडो खंभा ॥
जो कोइ होय तोर रखवारा । ता कहँ सुमिरो सुन हो वारा ॥
नातर छांडु विष्णु कर नाऊँ । अबही घात करों यहि ठाऊँ ॥
तब प्रह्लाद सुमिरै भगवाना । कहा तू करब दैत्य बलवाना ॥
अहो धरणिधर अहो मुरारी । यहि औसर प्रभु लागु गुहारी ॥

साखी—खंभा सौं हरि नीकसे, की भयंकर गात ॥

आधा नर आधा सिंह का, कीन्ह दैत्य ही घात ॥

दोऊ बंधु महा बलि मारा । दैत्य मारि महि भार उतारा ॥
फारचो उदर नखन सौं छीना । सुर औ नरन हरष बहु कीना ॥
मांग प्रह्लाद इच्छा फल आजू । तोहि भक्त लग हनौ दैतहिराजू ॥
कर जोरे प्रह्लाद अस भाखा । हे स्वामी भक्तन प्रण राखा ॥
मोक्ष पिता कहँ दीजै स्वामी । मोहि भक्ति सुन अन्तर्यामी ॥
साधु २ विष्णु अस भाखा । पुत्र पिता प्रण भल तुम राखा ॥
दोई जन्म आगे औतारब । तब तोर पिता देख मै तारब ॥
तैं मम भक्ति कीन्ह बडि सेवा । ताकर फल भाषौं कछु भेवा ॥
दैत्य हते जब बाल कन्हई । आवै देव सबै तेहि ठाई ॥
करहिं सुयस हरि सबहि बखाना । प्रह्लादहि देव स्वर्ग अस्थाना ॥

साखी—कीन्ह इन्द्र प्रह्लाद कह, सब मिलि कीन्ह बिचार ॥

नरसिंहरूप नर कीन्हा, ताको यह व्यवहार ॥

नारद चरित्र ।

चौपाई ।

एक समय इन्द्र यज्ञ ठानी । निवते सिद्ध ऋषि औ ज्ञानी ॥
पहुंचे गन गंधर्व सब झारी । सब मिलि कीन्ह स्नान सुधारी ॥
जो कोई गया इंद्र अस्थाना । इच्छा भोजन सब कहँ ठाना ॥

बहु विधि इंद्र करे सप्तकर्मा । पुरै न घंट जानसको मरमा ॥
 तब नारद भक्त कीन्ह बिचारा । धरौ धीर कहौ बचन उचारा ॥
 ऋषि जमदग्नि इच्छा खावा । तिहिं प्रभाव अनंग जनावा ॥
 ऋषि रत करै कै छांडै ठावा । बजै घंट अस मत्ता सुनावा ॥
 सुनतहि ऋषि तब कीन्ह पयाना । बज्यो घंट पूरण यज्ञ जाना ॥
 साखी--ऋषि मन में तब बूझ्यो, जान करौ अब व्याहु ॥

ऋतमान जब आये, राजा कइयप ठाहु ॥

चौपाई ।

देव नृपाति कन्या इक मोही । मांगौ आजु जाव नृप तोही ॥
 तब कन्या नृप दीन्ह बुलाई । कीन्हौ व्याह ऋषी तेहि ठाई ॥
 लै कन्या ऋषि घरहि सिधाये । भृगु कुल हरि औधानहि आये ॥
 जो धर्मदास संशय कछु तोही । कहौ बुझाय चरित्र अब वोही ॥
 भय क्षत्री महि व्याकुल भयऊ । मारन तासु जन्म हरि लयऊ ॥
 निछत्र कीन्ह बहु जीव संहारा । बैर हेतु भृगुकुल औतारा ॥
 सहस्रबाहु ऋषिगन जो मारी । पिता बैर सो प्रथम सम्हारी ॥
 क्षत्री मारि निक्षत्री कीन्हा । भृगु रूप विष्णु को चीन्हा ॥
 साखी--यहि विधि क्षत्री निकंदेऊ, परसराम बली बीर ॥

आगे भाव बतावऊँ, सुनौ संत मत धीर ॥

श्रवण चरित्र ।

चौपाई ।

अवध नगर दशरथ बडराऊ । पुरुषारथ जिन कहौ प्रभाऊ ॥
 तिनहि नारि बहु सबहि पियारी । रात दिवस जो कर हित भारी ॥
 एक समय आखेटहि गये राऊ । पशु भोरे कियौ ऋषि कहँ घाऊ ॥
 पानी तट ऋषि हरि २ कीन्हा । नृप पछितानो जब सुनि चीन्हा ॥
 ताके पितहि श्रवणकी बाता । लुव सुत दशरथ कीन्हौ घाता ॥

साखी-अहो ऋषि तुव सुत कहँ, दशरथ मारचो बाण ॥
यह चरित्र सुन मुनिवर, ततक्षण छाँडचो प्राण ॥
चौपाई ।

दोनों ऋषी काल बस भयऊ । नृप अन्याय बैर हरि ठयऊ ॥
सुतबिहून जसऋषि तनत्यागा । तैस काल नृप तोर अभागा ॥
पुत्रके शोक काल होय तोरा । देहू बैर कहा सुन मोरा ॥
नारद ऋषि तब कीन्ह तिवाना । राजा दक्ष यज्ञ जो ठाना ॥
देव ऋषी आये तिहिं ठाई । सब नृप बहुतै सेवा लाई ॥
ऋषि तब कहै सुनौ दक्षराऊ । शिव कोजियत निवतबुलवाऊ ॥
इन्द्र यज्ञ जब निवत जुआये । गण गन्धर्व सब देव रहाये ॥
तहँ शिव कीन्ह तोर अपमाना । आई कहौ सुन नृपति सुजाना ॥
सुनतहि क्रोध नृप पर जरेऊ । जरत हुताश मनहु घृत परेऊ ॥
साखी-शिव बिहाय सब निवते, चलै सबै तिहि पास ॥
देख गगना मुनि वरन को, सती वचन परकास ॥
चौपाई ।

हे प्रभु कहां जायँ मुनि राई । सो प्रभाव प्रभु मोहि बताई ॥
राजा दक्ष यज्ञ जो ठाना । तहां जायँ ऋषि चढे विमाना ॥
हे प्रभु मो कहँ आयसु होई । यज्ञ तात कर देखों सोई ॥
निवते बिन न बूझियत नारी । ऐसी इच्छा आहि तुम्हारी ॥
चली सती तब लागि न बारा । पिता भवन तहँवा पगुधारा ॥
देखत नृपति महा उर जरेऊ । काहू समाधान नहिं करेऊ ॥
व्याकुल भई दिगम्बर नारी । यही व्याह मम कुल भइ गारी ॥
सुनत विषाद सती मन जागा । परी अनल तब देही त्यागा ॥
हाहाकार भयो सभा मझारी । यज्ञ विध्वंस भयो सुनचारी ॥
हिमाचल ग्रह सती अवतरिया । गण दीन्ह नाम पारवती धरिया ॥
यहै चरित्र विष्णु जब देखा । शिव विवाह गुण मनमें पेखा ॥

साखी-शिव समाधि छूटै नहीं, कीन्हों विष्णु उपाय ॥
काम भाग परपंच कर, संगहि दीन्ह छिपाय ॥

चौपाई ।

सर समीर लागौ जब अंगा । बाल वृद्ध व्यापौ सब संग ॥
बार बार सब जग बस भएऊ । ऋषि मुनि व्याप्ति काम जो ठएऊ ॥
नारद ऋषि पारासर दोऊ । भये काम बस मुनिबर सोऊ ॥
तिन कुल व्यासदेव उतपानी । इनहू रति जो बरबस ठानी ॥
पारासर गए सागर तीरा । देख नारि मन धरहि न धीरा ॥
मछोदरी जा कहँ जग कहई । व्यास देवकी जबनी अहई ॥
नारद ऋषि किय तहां तिमाना । राजा एक स्वयम्बर ठाना ॥
ता कुल कन्या है कुलवंती । निश्चय व्याह करो जिहि संती ॥
चल ऋषि हरिसों बिन्ती कीन्हा । ब्रह्मा पुत्र कहिं बचन अधीना ॥
हे स्वामी मोहि दीजे रूपा । करि हों व्याह मोहिरुचिभूपा ॥
विष्णु अपनमन कीन्ह बिचारा । कर परपंच ऋषि सब झारा ॥

साखी-शिव की नारि बनाऊँ, सोई करब उपाय ॥

भयो काम बश नारद, बैर देव मम भाय ॥

चौपाई ।

नहिं जान नारद मतिहीना । वानर कर मुख ऋषिकर दीन्हा ॥
चलो ऋषी मन भयो अनंदा । कृपा कीन्ह मोहि बालगुविन्दा ॥
अवाशि जाय हम व्याहैं नारी । जहँ पुनि पहुँचे तहां कुंवारी ॥
दर्पन दीन्हों सभा मैझारी । ऋषि अपनो प्रतिबिंब निहारी ॥
देखत ऋषि क्रोध तब कीन्हा । विष्णु भाव कबहूँ नहिं चीन्हा ॥
जब हरि बिहँसे नारद पाहीं । सती यज्ञ तुम बूझब नाहीं ॥
परबस देखत मैं तन जारा । अब मैं कीन्हा भाव तुम्हारा ॥

साखी-बूझ परचो नारद जबै, गहे विष्णु के पांय ॥

क्षमा करो अपराध प्रभु, नर कौ रूप बनाय ॥

चौपाई ।

कन्या हाथ लीन जयमाला । नावहु गले गहि चरण गुपाला ॥
 शिव विवाह पार्वती सों कीन्हा । सती हेत तिन भल कै चीन्हा ॥
 तबही रूप प्रथम कर दीन्हा । दीन्ह शाप विष्णु सुन लीन्हा ॥
 अहो विष्णु तुम बैर बिचारा । तुमहू बैर देव व्यवहारा ॥
 वसुधा भारहि व्याकुल आही । सुत पुलस्त महा बल ताही ॥
 ले अवतार मारहुगे सोई । सो पुन हर तुम्हारा जोई ॥
 नारदका जस कीन्हों अंगा । तईसन जाय करौ परसंगा ॥
 बर बस बैर लेव सब पाहीं । विधिना रूप बनावै ताहीं ॥
 विष्णु अपन मन कीन्ह तिवाना । काके गिरह लेहुँ अवधाना ॥
 पूर्व जन्म जो दशरथ राऊ । सेवा कीन्ह यही परभाऊ ॥
 माँगिन तिन फल अंतक बारा । पुत्र होहु गोपाल हमारा ॥
 आये नृपति संग त्रैनारी । सेवा कीन्ही यही प्रकारी ॥

साखी—लेव अवतार अयोध्या, दैत्य बधन जो होय ॥

आज्ञा भयी आकाश तैं, करु उपाय अब सोय ॥

चौपाई ।

हिरनाकुश हिरण्याक्षहि मारा । ताकौ दियो मुनि ग्रह अवतारा ॥
 मुनि पुलस्त ग्रह जन्मौ बारा । रावन कुंभकर्ण बरियारा ॥
 जा कहँ विष्णु स्वर्ग कर राऊ । भक्ति हेतु ता कहँ जन्माऊ ॥
 नाम बिभीषण भक्त हरि केरा । जपै विष्णु नहिँ लावै बेरा ॥
 नृप कश्यप दुतिया अवतारा । सो तो भयऊ अवध भुवारा ॥
 तिन के गृह अवताराहि लीन्हा । अपने अंश चार तिन कीन्हा ॥
 राजा के गृह जन्मौ वारा । ज्योतिष राम वर्ग उच्चार ॥
 जेष्ठ पुत्र कौशल्या सुतही । राम नाम थापो पुन तबही ॥
 सुमित्रा के दोई बालक आही । लषन शत्रुहन भाषौ ताही ॥

दोई जन्म सुमित्रा किये सेवा । तातें हरि प्रगटे दोइ भेवा ॥
 कैकई सुतहि भरत जो भाखा । विप्रन दीन्ह पदारथ थाका ॥
 कौशिक ऋषि आये तेहि ठाई । नृप दशरथ तब हित बहु पाई ॥
 बार अनेक दण्डवत कीन्हा । नृप कहँ आशिर्वाद जो दीन्हा ॥
 है प्रभु कह आयसु जो होई । कृपा करो जिन राखौ गोई ॥
 जेष्ठ पुत्र जो राम सुजाना । ताहि देव नृप हो मम कामा ॥
 साखी-नृप बूझौ मन आपने, दिये बनै परकाज ॥
 थाती सौँपौ पुनि तुमहि, आन देखु मुनिराज ॥

चौपाई ।

राम लषण चले मुनि के साथ । ताडुका बांधि व्याहब रघुनाथा ॥
 चले राम लछमन मुनि संग । देख रूप जैसे कोटि अनंगा ॥
 दिक्षा मंत्र दियो ऋषि जानी । दीन्ह जाप कहि अमृत वाणी ॥
 ऋषि आश्रम आये रघुराया । यज्ञ शाला मुनिवर बैठाया ॥
 दीन्ह तुरन्त तब निर्भय भारा । मुनिकै दैत्य जो करै संहारा ॥
 आये बीर महाबल भारी । लागी होन परस्पर मारी ॥
 मुनिवर आज्ञा दीन्ही जबही । ताडुका दैत्य मार हार तबही ॥
 ताडुका दैत्य राम जब मारा । ऋषि मुनिवर तब कियो यज्ञ शाला ॥
 साखी-मिथिला नगरी रहत हैं, रच्यो स्वयंबर राय ॥

चलो राम सो देखिये, मुनिवर संग सहाय ॥

चौपाई ।

चले राम लक्ष्मन राऊ । मिथिला नगर अब धरिये पाऊ ॥
 पाहन शिला जबै पग लागा । प्रभु प्रगटे जो खटका भागा ॥
 गौतम नारि अहिल्या नाउँ । ताको हरि पठई निज ठाउँ ॥
 समाचार मिथिलापुर पाये । आदर कै मुनिवर लै आये ॥
 समाधान नृपति बड़ कीन्हा । उत्तम मंदिर बैठक दीन्हा ॥

जो कोई आय जान यज्ञ शाला । सब कहँ पोषण कीन्ह भुवाला ॥
 पहुँचे अवधि सुदिन दिन आये । राजा नगर महँ ढोल बजाये ॥
 साखी-जाके बल बहु होवै, धनुष उठावै सोय ॥
 सीता व्याहों ताहिको, मिथ्या वचन न होय ॥
 चौपाई ।

चल भइ सीता जहँ फुलवाई । देवी पूजन मातु पठाई ॥
 आवत राम मार्ग जब देखा । सुफल जन्म आपुन तब लेखा ॥
 अहो अंबिका आदि भवानी । सुनिये मातु तुम अन्तर्जामी ॥
 मोर मनोरथ पुरबो माता । सो बर देव जो मनमें राता ॥
 बिधि बिनती सीताकी जानी । तत्क्षण भई अकाश तें वाणी ॥
 अहो सीता लक्ष्मी अवतारा । निश्चय तोर राम भरतारा ॥
 सुनत संदेशा भयो अनंदा । जिमि चकोर पाये निशि चंदा ॥
 देवी पूजि गई निज सीता । मनमें हर्ष बहुत पुनि कीता ॥
 आई सिय जहँ सृष्टि भुवारा । उठै न धनुष सबै बलहारा ॥
 रावन बालि महा बलधारी । उठै न धनुष सबै बलहारी ॥
 जब नृप जनक भयो बिसमादा । उठै न धनुष जन्म मम बादा ॥
 तब रघुवर मुनिको शिर नावा । सभा मांझ तब धनुष उठावा ॥
 खैंचो राम धनुष चढो जबही । महा अवोर शब्द भयो तबही ॥
 साखी-मुनि गण त्याग्यो ध्यान तब, महि मंडल भुइं चाल ॥
 हरष्यो राजा जनक तब, सिया दीन्ह जयमाल ॥

चौपाई ।

दूख्यो धनुष धूम भइ भारी । परसराम तब लाग गुहारी ॥
 आवत तासु जो नृपति सकाने । बहुत नाम जो सुनत प्रमाने ॥
 सभा मांझ आये परसरामा । सब मिलि दंडवत कीन्ह प्रणामा ॥
 भृगुकुल कह सुन मिथिला राज । तोरचो धनु किन मोहि बताऊ ॥

रघुपति कहैं धनुष में मापा । तुम किहि काज करत है दापा ॥
 देखि राम भृगुकुल किय रोषा । मारौं शीस जो करौं सरोषा ॥
 बिहँसे राम लखन दोइ भाई । हे द्विज यान करौं सुरमाई ॥
 जान बूझि जिन होहुं अयाना । मिटै तिमिर ऊगै जब भाना ॥
 द्विज कुल देख किया परमाना । तातें तुमको भयो अभिमाना ॥
 साखी—द्विज कुल धनुष जो आपनो, दीन्ह रामके हाथ ॥
 मैं क्षत्री बल भंजन, खैंचो हां रघुनाथ ॥

चौपाई ।

खैंच्यो राम तासु धनु कैसा । तृणहि उठाय लेत हैं जैसा ॥
 परशुराम गहि ताके पाऊ । क्षमा करो कौशिल्या राऊ ॥
 कर प्रणाम भृगु वनहि सिधारे । रामचन्द्र रहै सभा मझारे ॥
 ये जो आहि सो त्रिभुवन राऊ । तिन महि मंडल तेज प्रभाऊ ॥
 कहैं सबै हरि को अवतारा । परशुराम औ राम भुवारा ॥
 जो निज इच्छा आवत जाई । तौन गर्भ काहे दुखपाई ॥
 ऐसा निरंकार परकाशा । सब तें न्यारा सब में बासा ॥
 इच्छा कर जस त्रिभुवन राऊ । इच्छा आस करैं निर्माऊ ॥
 बाजी लगा जीव जो राखा । ताकी भाक्ति सबै मिलि भाखा ॥

साखी—कोइ इक ज्ञानी पारखी, परखे खरा और खोट ॥

कहे कबीर तब बांछि हैं, रही नाम की ओट ॥

चौपाई ।

राम लखन के सुनो प्रभावा । मिथिला पति एक दूत पठावा ॥
 नृप दशरथ बेगही चलि आहू । राम लखन कर सुनो बिवाहू ॥
 नृप दशरथ बेगही चलि आएहू । ऋषिन करायवो तहां बिवाहू ॥
 चारों भाइ ब्याह तिहिं पाहीं । बहुत अनंद कीन्ह मन माहीं ॥
 चारों भाई और भुवारा । लै चलि आये अवध मझारा ॥
 तहां आइ बिप्रन दिय दाना । कछु दिन कियो सुखराम सुजाना ॥

भरत गये जहँ जननी ताता । विद्या पढ़ै बहुत हरषाता ॥
अवध नरेश मता अस ठाना । रामहिँ राज देहु मन माना ॥
सब मिलि ऐसा मत उपराजा । करब बिहान राम कहँ राजा ॥
यह चरित्र जब देख भवानी । समझी निराकार की बानी ॥

साखी—मूढ मनुष्य न बूझै, राम लीन्ह अवतार ॥

मार दैत्य संहारे, लंका के सरदार ॥

चौपाई ।

सवा लक्ष जीव प्रतिदिन खाई । कौतुक राज बनावत राई ॥
अंबिका गई कैकई पासा । हे रानी तुव पति मति नाशा ॥
रामहि काल देत हैं राजू । निश्चय हैं हैं तोर अकाजू ॥
जो वरदियो नृपतितोहि काहीं । सो तुम मांगौ आजुहि माहीं ॥
भरतहि राज राम बनो वासा । माँगहु आज जो होइ दुहासा ॥
गयी कैकई मांगा बर सोई । राम बिछोह प्राण नृप खोई ॥
त्यागो प्राण अवध नृप जबहीं । सरवन बैर जन्म लियो तबहीं ॥
चले राम लक्ष्मण सिय साथी । करहिँ शोक धुनहीं बहु माथा ॥
रामहिँ संग दूर लगजाई । फिरहु राम तुम तात दुहाई ॥
सुमंत मंत्री अस वचन सुनाये । पठये दूत तब भरत बुलाये ॥
जाइ बुलावहु भरतहि आजू । उन कहँ देहु अवध कर राजू ॥
आज्ञा भयी फिरयो सब लोगा । सब कहँ भयो राम कर शोगा ॥

साखी—भरतहि पठै सँदेश पुनि, तबहिँ भयो रवि सांझ ॥

गये जहां तहां रघुपति, बैठ गये वनमांझ ॥

चौपाई ।

राम लखन बैठे सिया लाई । फिरहु भरत तुम तात दुहाई ॥
फिरहु भरत प्रभु आयसु होई । प्रजा लोक संग सब कोई ॥

राम लक्ष्मण औ सिय साथी । बन मारग लीन्है धनु हाथा ॥
 बहु दिन रहै ऋषिनके ठाई । समाचार लंकापति पाई ॥
 लीन संग मारीच बलवंता । हरै सिया मन हो हर्षता ॥
 मारीचही कीन्ह मृग वेषा । नहिं छल बूझ राम नरेशा ॥
 मृग को देख नृपत तब भूला । लोभ मोह को बन जो फूला ॥
 प्रगट्यो सांझ अन्ध भो भाना । बिगरयो मोह जो ज्ञान छिपाना ॥
 राम लखन गए मृगहि शिकारा । सीतहि रावन रथ बैठारा ॥
 आगे मारग रोक जटाऊ । मार गयो तिहि रावन राऊ ॥
 मारीचहि राम कीन्ह जब घाता । बूझ परी नारद की बाता ॥
 सिय हर रावन मार लुटेवा । जाकी जगत करत है सेवा ॥
 ढँढहु लक्ष्मण बन गुहराई । मोह भयो जब सिया न पाई ॥
 मारीचहि मार राम पछिताना । जबहि जटाउ कही सहिदाना ॥
 हनुमान मिल पंथ मैझारा । रावन मारयो राम भुवारा ॥
 सुन स्वामी तू त्रिभुवन नाथा । कृपाकरो तुम मोरे साथी ॥
 हनुमान जब कीश अनुसारा । कुशल प्रभाव पूँछ तिहिबारा ॥
 बालि सुग्रीव दोइ जन भाई । बालि लीन्ह वध बंधु छुडाई ॥
 जो प्रभु कीजे कपि पर दाया । मारो बालि सुनो रघुराया ॥

साखी—रामचंद्र अस बोले, कीने बालि कुकर्म ॥

मारौं ताहि पल भीतरै, जान कहौं अस मर्म ॥

चौपाई ।

आए रघुपति जहँ गए राजा । बालि मार सुग्रीव निवाजा ॥
 मार बालि कहँ एकहि तीरा । बूझो संत गही नहिं पीरा ॥
 यह तो भेद जानि है सोई । सतगुरु दया जाहि पर होई ॥
 तब हनुमान लंक कियो गवना । पहुँचै जाय जहाँ रह रवना ॥
 पहुँचे जाय भेट भइ सीया । दैत्य देख वह कौतुक कीया ॥

मारहिं कपि कहँ कौतुक जानी । तब हनुमान आप बल ठानी ॥
जारि नगर तब कीन्हों छारा । नगर लोग सब कहँ बिकारा ॥
साखी-आय कहौ रघुपति सौँ, समाचार हनुवीर ॥
सिंधु बांधि हरि ऊतरे, दैत्य वधन रनधीर ॥

चौपाई ।

आए कीन्ह दैत्य संग्रामा । मारे दैत्य बहुत तब रामा ॥
कुंभकरन निद्रा सौँ जागा । रघुवर सौँ युद्ध करै अनुरागा ॥
कहै बिभीषण सुन नृप रावन । आए राम जो असुर सतावन ॥
सिया संग लै जाहु तुरंता । क्षमा अपराध गहु पग हर्षता ॥
मारी लात बिभीषण भाई । क्रोधित मिलो राम कहँ आई ॥
समाधान नृपति बड कीन्हौ । लंका बकसि ताहि को दीन्हौ ॥
कुभकरण गहि समर अपारा । ताको हरि बहु बल सौँ मारा ॥
इंद्र जीति तब लाग गुहारी । कर अश्वमेध तपस्या भारी ॥
तिन पुनि रोके कपिदल जुथ्या । बिभीषण भेद कहौ अज गुथ्या ॥
जौलौं पूण जज्ञ ना होई । मारहु राम वध करै सोई ॥
भयो प्रभात राम जब देखा । लक्ष्मण लाग्यो बान बिशेषा ॥

साखी-मार सो महाबली, मेघनाद जिहि नाम ॥

सुनत क्रोध रावन कियो, कठिन कीन्ह संग्राम ॥

चौपाई ।

दैत्य महाबल शक्ति संधाना । जूझे लक्ष्मण भया निदाना ॥
तुम हनुमान लै आवहु मूरी । उत्तर दिशा देश बड दूरी ॥
दौनागिर पवत कर नाऊ । संजीवन साहित ताहि ल आऊ ॥
सजीवन बास तें लक्ष्मण जागा । हर्ष भये तब कपि कर भागा ॥
तब रघुवीर घेर गढ लंका । दैत्यनके जी उपजी शंका ॥
तब रावण गहि समर अपारी । बंधुहि व्याकुल है सब झारी ॥

रामचंद्र रावन कहँ मारा । वार अनेक सीस भुइ पारा ॥
 मारयो हृदय ताक कै जबही । रावन काल वश्य भयो तबही ॥
 सीता समाधान हरि कीन्हा । ताको रूप न काहू चीन्हा ॥
 सिया लीन्ह रघुवीर बुलाई । राज बिभीषण दीन्ह सुहाई ॥
 लै सीतहि अवधपुर आना । भरतहि कीन्ह बहुत सनमाना ॥
 सीता सती रही अवधाना । गर्भ वास लौकुश उतपाना ॥
 साखी—राज करै रघुवंश मणि, तब अस कीन्ह प्रमान ॥
 थाप्यो कोट अयोध्यहि, सुनौ मंत्र हनुमान ॥

चौपाई ।

जबहि राम लंका से आये । अयोध्या कोट उठावन लाये ॥
 लक्ष्मण भाइ संग तब लीन्हा । सुदिन जानकै तब निव दीन्हा ॥
 उठत कोट सो भय अस शोरा । है कछु द्रव्य नीच अस बोला ॥
 सुन अस बचन राम रघुराई । खनहु खनहु अस आज्ञा पाई ॥
 चहुँ दिश खनै जो बाजु कुदारा । तपसी एक देख तहँवारा ॥
 लुहिडा माथै दै तप करई । जोग अरंभ सदा चित धरई ॥
 भौंह बार मुख रहे छिपाने । बैठे महि के तले रयाने ॥
 देखा ऋषिहि बहुत भय माना । शाप न देई बहुत सकाना ॥
 छांडि समाधि निराखि जब हेरा । राम दंडवत किये चहुँफेरा ॥
 साखी—बोले बचन ऋषी तब, कोहो सो कहु मोहि ॥
 रूप भाव बहु आगर, देखों नृप सम तोहि ॥

रामचंद्र वचन—चौपाई ।

दशरथ तनय राम मोहि नाऊ । रहों समीप अवधपुर गाऊ ॥
 ऋषि कहो भयो राम अवतारा । पूंछौ यह कह करब भुवारा ॥
 हे ऋषि राज मैं कीर्ति बनाऊँ । जातैं रहे यहि जग मैं नाऊँ ॥
 कह ऋषिराज जीवन है थोरा । छांडां कोट कहा सुन मोरा ॥

राम कह्यो ऋषि सो निज मर्मा । केते दिवस किया तपधर्मा ॥
लोमश ऋषि मोर है नाऊ । अपने जन्म को कहौ प्रभाऊ ॥
आठ पहर रात दिन होई । अहो रात कहैं सब कोई ॥
दोई पाख कर प्रहर प्रवाना । सो एक दिवस पित्रन को जाना ॥
वर्ष दिवस जब उनको होई । एक दिवस देवन को सोई ॥
बारह वर्ष दिवस जब जाना । चौदहसहस्र इकमनु जो बखाना ॥
सप्त मनु जबही जाइ बिगोई । तब इक इन्द्र काल बस होई ॥
सप्त इन्द्र जब होवै नाशा । इक ब्रह्मा को होई बिनाशा ॥

साखी-सप्तब्रह्मा शब बिनशहीं, तब एक विष्णु कौ नाश ॥

सप्त विष्णु जब बीतही, तब इक रुद्र बिनाश ॥

सोरा रुद्र गति जब हो जाई । तब इक रोम मम परे खसाई ॥
तातें लोमस नाम है मोरा । करौ समाध जीतब है थोरा ॥
सुन रघुवीर अचंभित भयऊ । ऋषिको बचन प्रतीत न लयऊ ॥
राम चरित्र ऋषी तब जाना । क्या सोचौ रघुवीर सुजाना ॥
देव अंगुष्ठ भेंटहु जो मोही । तैस अंगुष्ठ दैऊँ मैं तोही ॥
यहै कमंडल मोरे साथी । काढौ गिन जो आवहि हांथा ॥
क्रोधित हाथ डार भगवाना । गिनि उन्चास कोट परवाना ॥
परचो पाय रघुवीर न जाना । लोमस बचन सत्त कर माना ॥
एतिक मुदरी गिनी बिशेषा । कमंडल को कहँ कहिये लेखा ॥
इतने राम रावन होय गएऊ । सुनि रघुवीर अचंभौ भएऊ ॥

खासी-जान्यो जन्महि अल्प जब, चले स्वर्ग अस्थान ॥

निराकार निरंजन, तासु मर्म नहिं जान ॥

चौपाई ।

त्याग्यो राजपाट बन्धु चारी । गये स्वर्ग नृप सैन सिधारी ॥
आप इच्छा जन्म पुन लीन्हा । कृष्ण चरित्र आगे पुन कीन्हा ॥

जाहि राम को जपत संसारा । ताको तो ऐसो व्यवहारा ॥
 बाजी दिखाय जीव सब राखा । मारै अंत करै अस लाखा ॥
 काह करै जिव बस परेऊ । तातैं सत्त शब्द चित धरेऊ ॥
 जमराजा है अति बरबंडा । मारै ब्रह्मा, विष्णु नौ खंडा ॥
 काल फांस कैसे मुक्तावै । जब लग सत्तनाम नहिं पावै ॥
 साखी-नाम अदल जो पावै, कहै कबीर बिचार ॥

होय अदल जो निश्चय, जमराजा रहे हार बार ॥

चौपाई ।

सुन धर्म मैं तोहि सुनाऊं । कृष्ण चरित्र को भाव बताऊं ॥
 कृष्णचरित्र ।

राम रूप त्रेता अवतारा । गयो बियोग सकल संसारा ॥
 करै भेख बहुत विधि कैसा । लेखा मूल व्याज है जैसा ॥
 एक नार रघुपति दुख पाया । सोरा सहस्र गोपि निरमाया ॥
 प्रथमहि गोपिन को निर्माया । पीछे कृष्ण देव है आया ॥
 देवकी कहँ जन्म लियौ जाई । दीन्ह सबै गोकुल पहुँचाई ॥
 नंद के गेह आन तिन राखा । है मम पुत्र जसोधा भाखा ॥
 करें नंद जसोधा महरी । पल भर कृष्ण राखना बहरी ॥
 गोपी सबै बिलास बनावैं । रात दिवस हरि के गुण गावैं ॥
 नृप दशरथ वसुदेव अवतारा । कौशिल्या सुमित्रा देवकी वारा ॥
 नारद ऋषि कंसहि कह भेऊ । यह निज जन्म न जानै केऊ ॥
 उपजो तुव बैरी भगवाना । नंद गेह गोकुल अस्थाना ॥
 सुन नृप कीन्ह जो बहुत उपाई । मारहु ताहि कहै अस राई ॥
 कागासुर इक दैत्य अपारा । बल पौरुष जिहिं कै अधिकारा ॥
 ताको कंस बचन अस भाखी । राम कृष्ण कर फोरहु आंखी ॥
 चलयो दैत्य आयो हरि पाहीं । सखा संग जहँ बाल कन्हाहीं ॥
 जान्यो कृष्ण दुष्ट यह आही । चपट कै मारयो है हरि ताही ॥

साखी-मारौ दैत्य महा बली, दैत्य राज भयमान ॥
भगनी तासु जो पूतना, ता कहँ दीन्हों पान ॥
चौपाई ।

चली पूतना कर छल भेषा । गरल लगाइ पयोधर रेखा ॥
लेकै पयोधर कृष्ण लगाई । तारी तबै सबै बिष खाई ॥
एक बार ग्वालन संग गएऊ । जान बकासुर छैकै लएऊ ॥
मारयो कृष्ण ताहि पल माहीं । नहीं दैत्य जीते कोइ जाहीं ॥
इन्द्र पूजा नहिं दीन्ह गुवारा । वर्षे इंद्र अखंडित धारा ॥
डारयो इंद्र वर्षा दिन साता । हरि गिर लीन्हों ऊपर हाँथा ॥
साखी-सात दिवस जब वर्षेऊ, जान्यो इंद्र भुवार ॥

क्षमा अपराध अब कीजिये, देव विनय अनुसार ॥
चौपाई ।

एक बार कालिन्दी तीरा । बछड़े लै गए जादों बीरा ॥
लागी प्यास पिआवहिं पानी । पीवत ही भइ सब की हानी ॥
देखत कृष्ण अचंभौ भएऊ । उरग गरल सांवल तन भएऊ ॥
पुन धँस गये तह यदुराई । नाथ्यो नाग वारि महँ जाई ॥
साखी-हय चरित्र माधव कियो, जानत नाहिन कोय ॥
बूझेंगे कोइ बिरले, सतगुरु मिलिया सोय ॥

चौपाई ।

केसी नाम बंधु बड बीरा । तिन पुन कीन्हा असुर शरीरा ॥
तब निकंद कीन्हे जो ठाना । छलके मारयो तेहि भगवाना ॥
सुकल केश कहँ बेग पठावहु । राम कृष्ण कौ बेग लै आवहु ॥
चल अक्रूर आये हरि पाहीं । कृष्ण चरित्र बूझे पल माहीं ॥
सोरा सहस्र अबला सों नेहा । बूझ न परै जीव दोइ देहा ॥
साखी-बहु क्रीडा हरि कीन्हीं, जानत नाहि न कोय ॥
आजिया पुत्रहि पालिये, आप स्वारथी होय ॥

चौपाई ।

मारत तासु बार नहिं लावा । ऐसा देखो हरी स्वभावा ॥
 रावन कुंभकरन जा मारा । ताको जन्म शिशुपाल अवतारा ॥
 चलत कृष्ण गोपिन किए शोभा । संग भले तब जादों लोभा ॥
 मारन कौं हरि मता जो ठाना । मथुरासे हरि कीन्ह पयाना ॥
 मुष्ट चार औ दोइ खँडावा । सब असुरनहिं कंस गुहरावा ॥
 रंग भूमि नृप कंस बनावा । काल रंग भूमीही आवा ॥
 चल भए कृष्ण जहाँकहँ तबही । कुबरी को सन्मान कियो जबही ॥
 पूर्व जन्म तिन सेवा कीन्हा । भक्ति हेतु ताको रति दीन्हा ॥
 साखी-कुबरी को सन्मान कर, चल भयो राज द्वार ॥
 हस्ती कौं बल महाबल, तिन को पहिले मार ॥

चौपाई ।

मारत तासु बीर जो धाये । मुष्ट चार अरु दोइ खडाये ॥
 मुये नृप पुन तब खस परेऊ । कालिन्दी तट आन जराएऊ ॥
 उग्रसेन कीन्हों सन्माना । गये हरि मात पिता अस्थाना ॥
 पूर्व जन्म सेवा तिन कीन्हा । भक्ति हेतु मैं दर्शन दीन्हा ॥
 जरासन्ध नृप लाग गुहारी । सत्रह बार तिन कीन्ही मारी ॥
 तैतिस क्षोहणि दल तिन जीता । जमन केर सम्हर पर बोता ॥
 नृपमुचकुन्दहि तब पुनि मारा । ताकौ हरि पुनि बैर बिचारा ॥
 साखी-यह चरित्र कहु कैसौ, जमन को आनि मराव ॥

जीव कौ बदला जीव है, अदल अंश कर न्याव ॥

चौपाई ।

कंस मार हरि गोकुल गएऊ । गोपिन समाधान हरि किएऊ ॥
 सब मिल कीन्हों मंगलचारा । तब हरि ऐसौ वचन उचारा ॥
 दुरबासा ऋषि तप बड कीन्हा । इच्छा भोजन माँगहि लीन्हा ॥

जाय सबे ल जमुनाहि पारा । लै चलि भोजन भर २ थारा ॥
जमुना बहु विधि आप गुसाई । तब हरि ऐसा वचन सुनाई ॥
कहौ जाइ कालिन्दी तीरा । कृष्ण छुवा नहिं मोर शरीरा ॥
होइ है थाह जाइ हो पारा । चल भो गोपी लाग न बारा ॥

साखी-कृष्ण सन्देशा कहिके, सबै भई तब पार ॥

जाइ कराइन भोजन, तब विन्ती अनुसार ॥

चौपाई ।

तब गोपिन अस वचन सुनावा । हे प्रभु पार जाहिं किहिं भावा ॥
कालिन्दी से कहि सब मादा । ऋषि नहिं खाइब मोर प्रसादा ॥
कहत सन्देशा सब भई पारा । अचरज भयी मन माहिं बिचारा ॥
ठगई लगा तीनों पुर माहीं । कृष्ण कहाये अचरज नाहीं ॥
चौथे लोक बसै परधाना । ताहि खबर कहु विरलन जाना ॥
तपके तेज कहा बड भएऊ । तीन लोक जो अचरज ठएऊ ॥
एकवार शिशुपाल भुवारा । कृष्ण से कीन्ह जो समर अपारा ॥
मारचो तबै दैत्य बल बीरा । निकसे प्राण जो छाड शरीरा ॥
सब के देखत कृष्ण जो खावा । तेहु न बूझे काल स्वभावा ॥
सब के देखत ग्रास जो कीन्हा । तासों कहे मुक्ति हरि दीन्हा ॥

साखी-काल सबन को ग्रास्यो, वचन कह्यो समुझाय ॥

कहैं कबीर मैं का करों, देख नहिं पतिआय ॥

चौपाई ।

बूझो संतो काल की हानी । हरि को भाव भले मैं जानी ॥
कृष्ण के भयो जो प्रदुमन बारा । ताकुल अनिरुध कीन्ह अवतारा ॥
सुन प्रवीन बानासुर राऊ । शिव सेवही महाबल पाऊ ॥
ता नृप कै दुहिता यक भयऊ । ऊखा नाम तासु कौ ठयऊ ॥
रूप आगर किमि करो बखाना । ताहि देख कर काम लजाना ॥
उन्मद यौवन भयो पुन जबही । काम बान सर लागेउ तबही ॥

साखी-तासु दूत गए द्वारिका, अनुरुध अंश भुवार ॥

दोऊ उपजो मर्म अब, जस हंसनकी ज्वार ॥

चौपाई ।

दिवस आठ दस बीते जबही । अनुरुध कुँवर प्रगट भयो तबही ॥
बानासुर ने क्रोध दल साजा । अगणित बाजसम्हर कौ बाजा ॥
युद्ध करें दैत्य तहँ जाई । अनिरुध सब कहँ मार हटाई ॥
छै प्रकार जीतो उन जबही । सातई बार भर्म भयो तबही ॥
दैत्य मार गहि समर अपारा । बांध चपल कै कृष्ण कुँवारा ॥
कोई कहै मारो विषको मूला । शत्रु राखकै नृपकस भूला ॥
मंत्री कहई सुनो भुवारा । शिव की आज्ञा मैं यह मारा ॥
नारद ऋषि तबही सुधि पाई । कृष्णहि बात जनावहु जाई ॥
चलभयो कृष्ण जो क्रोध अपारा । दैत्य जहां तहँवा पगु धारा ॥

साखी-गरुड चढे तब कृष्ण सो, पुरही पंहुँचे आय ॥

जाही नग्र अग्नि दियो, दैत्य राज तिहि ठाय ॥

चौपाई ।

आय दैत्य करें संग्रामा । हरि भेटें तेहि यम उन ग्रामा ॥
मारो हलधर अगिनित वीरा । बानासुर देख परे तेहि भीरा ॥
मोरा कृष्ण मता सुन आजू । अटल दियो माह शंकर राजू ॥
बहु विधि युद्ध दैत्य तब कीन्हा । कृष्ण चपल तेहि बांधहि लीन्हा ॥
बांध्यो नृप शंकर सुधि पाई । क्रोधित आइ तब कृष्ण लराई ॥
दोनों बीर महा बल धारी । लागी होन परस्पर मारा ॥
दोनों मंत्र पुनि दीन अडाई । तारी मार मार पुन धाई ॥
दौइ जुरे पुन मल्ल समाना । कातुक आइ निरंजन जाना ॥
दोउके समर पावक उठि जबही । आदि भवाना चल भइ तबही ॥
दोनों सुत कहँ जब विलगावा । बादल पवनके जैस स्वभावा ॥

साखी-दोई सुत तब बरजी, आदि भवानी आय ॥

बर ऊषा अनुरुद्ध को, शंकर दीन्ह मिलाय ॥

चौपाई ।

चले कृष्ण और सुत भामिनि । तासु अंग चमकै जिमि दामिनि ॥
कृष्ण द्वारिका पहुँचे जाई । सो वृत्तान्त कहौ समुझाई ॥
जोपै हर हरि को व्रत धरई । प्रभु सेवक कहु काहे लरई ॥
प्रभु सेवक कहु कैसे लडाई । सो गति मोहि कहौ समुझाई ॥
हरि हर युद्ध सबै कोइ जाना । सहस्र नाम किमि करब बखाना
यमराजा जु ठगौरी लायी । ज्ञान देख कर चेतो भायी ॥
बूझौ सब मिलि पाखंड धरमा । मै जानौं भल कालहि मरमा ॥
अदेख देख सब कहि समुझाई । ताकौ विरला जन पतिआई ॥

साखी-शंकर कियो जुद्ध हरिसों, तब कहु कैसो दास ॥

पंडित जन सब थापहीं, सहस्र नाम विश्वास ॥

चौपाई ।

चारों वेद को मूल बताऊँ । सहस्र नाम को सार बुझाऊँ ॥
काशी में विश्वास जनावई । विश्वनाथ के मंदिर धावई ॥
विश्वनाथ को भेद बतावहु । सार ग्रंथ मोही समझावहु ॥
सबै ग्रंथ करि आगिल कीन्हा । भक्ति तत्त्व सबै मिलि चीन्हा ॥
सब पर सहस्र नाम परवाना । जहँ लग शास्त्र रु वेद पुराना ॥
तेहि जानै जेते सब कोई । बूझै मरम जु विरला कोई ॥
बूझौ पंडित भेद बताई । प्रभु सेवक कहु कैसे लराई ॥
यह सब बंध बहुत मै भाखी । ते जम राजा सब ठग राखी ॥
ज्यों नारी पिय को व्रत तजई । दूजे जु प्रेम प्रीति सों भजई ॥
तैसो देखो यह संसारा । नाम बिना किमि उतरै पारा ॥

साखी-भूल परी सब दुनियां, पाखंड के व्यवहार ॥

मूल छाडि डारै गहै, कैसे उतरै पार ॥

चौपाई ।

तब हरि कीन्हे चरित अपारा । सो अब भाखौं अगिल व्यवहारा ॥
 पांडव पांच सेवा बहु करई । तिन सों कृष्ण हेतु बहु धरई ॥
 मारन तासु को मतौ बिचारा । पांडव कौरव नृप दोह भारा ॥
 दोनों में छल कियो भगवाना । ताको मर्म काहु नहिं जाना ॥
 बंधु बिरोध वैर उपजाई । प्रतिदिन समर करें तहँ आई ॥
 राजा दुपद स्वयम्बर ठाना । तहँ पारथ राहु संधाना ॥
 दुर्योधन अस कीन्ह उपाई । कन्या मारि लेव पांचों भाई ॥
 कृष्ण ताहि छल मत उपजावा । तातें ताहि पांच पति भावा ॥
 तेहि मारन हरि मतौ बिचारा । गीता कह अध्याय अठारा ॥
 कौरव आइ जो करहिं लडाई । ताहिं कृष्ण छलसे मरवाई ॥
 मारचो करण गंगसुत द्रोना । सब को मारि कियो दल सूना ॥
 मारचो दुर्योधन जो राई । अठारह क्षोदणी मार गिराई ॥

साखी—पांचों पांडव बचि रहे, औ जूझे सब झार ॥

धरमराय अस कीन्हा, कृष्ण परी हंकार ॥

चौपाई ।

चल भये कृष्ण स्वर्ग अस्थाना । शून्य आदि जहँ शशि नहिं भाना ॥
 पुर वैकुण्ठ ते आगे गयेऊ । तहां जाइके स्तुति कियेऊ ॥
 अलख निरंजन अंतर्यामी । सब तें न्यारे हौ तुम स्वामी ॥
 सब में व्याप्त निरंजन राया । पांचों तत्त्व शून्य उपजाया ॥
 तुमही ब्रह्मा विष्णु महेशा । आदि अंत तुम देव गणेशा ॥
 अहो कृपालु कृपानिधि स्वामी । करहु दया तुम अंतर्यामी ॥
 ततक्षण भई अकाश तें वाणी । अहो कृष्ण सब को उतपानी ॥
 अब जो कहैं करो सो जानी । सोई बचन लव सिर मानी ॥
 तुम भेजा महि भार उतारहु । असुरनको विध्वंस के मारहु ॥

साखी-मारहु जादव बशं कहँ, मानो वचन रसाल ॥

गोपी जाय संहारो, तेहि पाछे तुव काल ॥

कृष्णवचन-चौपाई ।

कृष्ण कहै सुन पुरुष पुराना । काल अभै कहां मोर ठिकाना ॥

निरंजन वचन ।

तैं मम अंश मोहिमें बासा । काल रूप संसार निवासा ॥

पातक जीव जो रहै महाबल । मारहु तिनिही तुम अतिबल छल ॥

उपजत विनसत क्षीन भइ देहा । कलियुग आवै क्षीण सनेहा ॥

क्षीण शरीर अवधि भइ थोरा । पूजा अवधि आई कै तोरा ॥

जस कछु कहो कीया सोचहिहौ । जाकौ दिया राज महि करिहौ ॥

छाडो महि मंडलको भाऊ । जगन्नाथ में कष्ट बनाऊ ॥

तजो कृष्ण अब बेग शरीर । आये अत्र अब दास कबीर ॥

कृष्ण वचन ।

साखी-सुन कियो कृष्ण अचंभो, कैसो दास कबीर ॥

सो मोहि स्वामी कहब सब, तब मैं तजों शरीर ॥

निरंजन वचन-चौपाई ।

कली अनेक राज्य है मोरा । कलियुग नरहि अवधि है थोरा ॥

पांडव नंदन यज्ञ जो ठानही । ऋषिगण सबही निवत जु आवहि ॥

यज्ञ पूर्ण नहिं ताकर होई । नाम प्रभाव कहै नहिं कोई ॥

कलि उत्पन्न मनुष्य शरीर । जा कहँ सुनियो दासकबीर ॥

तिनके शिष्य सुपच जो होई । पूरण यज्ञकर ततक्षण सोई ॥

या सहिदानी तोहि बताऊँ । तोहि सेती महि मंडल छाऊँ ॥

बालिहि राम रूप तुम मारा । ताकर होइ व्याध औतारा ॥

ताकर बैर देहुँ तुम जाई । फेर जीव कछु संशय नाई ॥

सुनिकै कृष्ण चले सिरनाई । नगर द्वारिका पहुँचे आई ॥

पांडव निवते यज्ञ पठाये । चलिये स्वामी बेग बुलाये ॥
 मारन बंधु या क्रिया लागा । तातें यज्ञ रची है रागा ॥
 चल भये कृष्ण बार नहिं लाये । पुर पांडव के आश्रम आये ॥
 आवत समाधान नृप कीन्हा । क्षत्र तानि सिंहासन दीन्हा ॥
 आवत कृष्णसभा सिर नावा । भोजन को तब आज्ञा पावा ॥
 साखी-बैठे गन्धर्व देव गण, ऋषि मुनिवर सब झार ॥

सब मिलि कीन्हा भोजन, इच्छा के अनुसार ॥

चौपाई ।

भोजन भये घंट नहिं बाजा । राय युधिष्ठिर को भयी लाजा ॥
 अहो कृष्ण का करौं उपाई । सो मोहि स्वामी कहिये समझाई ॥
 जबहि कृष्ण अस भाव बताया । सुनहु मंत्र युधिष्ठिर राया ॥
 खोजहु भक्त जो निर्गुण गावयी । सतगुरु महिमा सदा बतावयी ॥
 आनब ताहि यज्ञ निवताई । दीन भाव कर ताहि लिवाई ॥
 कृष्ण बचन सुनि युधिष्ठिर राजा । भगत बुलावन दूत पठाया ॥
 सुनिके दूत चले चहुँ देशा । नहिं कोई भक्तन भेटें वेशा ॥
 चले भीम तब लागि न वारा । चहुँ दिश फिर काशी पगुधारा ॥
 बैठे सुपच ताहि सों कहई । निर्गुण भक्त यहां कोई रहई ॥
 कहै सुपच निर्गुण को जानों । सतगुरु महिमा सदा बखानों ॥

साखी-कहै भीम सुन हरिजन, कृपा करौ मम संग ॥

चलो जहां हरि बैठे, स्वामी बाल गुविन्द ॥

चौपाई ।

कहै सुपच प्रभु कैसी कहऊ । कालहि जान कृष्ण परि हरऊ ॥
 सुनतहि भीम कोप तब कीन्हा । यामैं कहा भक्त कर चीन्हा ॥
 यहि मारो तो शख रिसाई । कह्यो मंत्र राजा पर जाई ॥
 तीन लोक के जे प्रभुराई । तिनको भाखै काल कसाई ॥

कृष्णहि कहै काल की फांसी । कीन्ही आय भक्त की हांसी ॥
मारचो नहिं पर तुव भय माना । यह सुनकर बिहिसे भगवाना ॥

साखी-जाव युधिष्ठिर वेग दै, तुम आनो गहि पांय ॥

आज्ञा मानि चले तब, आये युधिष्ठिर राय ॥

चौपाई ।

अहो संत तजिये अपराधा । अधम उधारन सुनियत साधा ॥
चलो स्वामी मेरे गृह आजू । कृपा करौ मम होवै काजू ॥
कहैं सुपच सुन पांडव राऊ । तोर का काज होय वहि ठाऊ ॥
तुम्हरे गये होय मम काजा । परमारथ तुम को बड साजा ॥
चल परमारथ कारण संता । सभा माहिं बैठे हरषंता ॥
आवत सुपच कृष्ण जब जाना । होय काज पूरण सनमाना ॥
राय युधिष्ठिर पखारे पाऊ । भोजन सादर आन जिवाऊ ॥
भोजन करके सुपच भयो ठाढा । बाज्यो घंट शब्द भयो गाढा ॥
बाज्यो घंट यज्ञ भयो पूरा । कौतुक देखि ऋषीगण भूला ॥
पूरण यज्ञ विष्णु जब जाना । तबही कीन्ह द्वारिका पयाना ॥

साखी-बूझोरे नर परानी, क्या सुपचै अधिकार ॥

गण गन्धर्व सुनि देव ऋषि, सब मिलि कीन्ह अहार ॥

चौपाई ।

सब के खाये घंट नहिं बाजा । धर्म की देह युधिष्ठिर राजा ॥
सो सब रहे पूर्ण यज्ञ नाहीं । नामहि महिमा जानत नाहीं ॥
सुपच जान भल नाम प्रभाऊ । तातें पूरण यज्ञ कराऊ ॥
कृष्ण शक्ति में मुनि ऋषि झुला । जान बूझि कै पंडित भूला ॥
बूझो सन्तो नाम हमारा । नाम विना किमि उतरौ पाश ॥
कृष्ण पारथही वेग बुलावा । तेहि पुनि निज मतो सुनावा ॥
गोपी लैकै जाऊँ मैं जहँवा । पुर वैकुंठ सुमेर है तहँवा ॥

मथुरा तैं तुम वेग ल आवहु । जाहु तुरन्त गहर जनि लावहु ॥
 चल भयो पार्थ हाथ धनु तीरा । गोपी लैन कोटिन यदुबीरा ॥
 आपसु में जो करे लडाई । इक मारे एक मरजाई ॥
 छप्पन कोटि जो सबै सिरानो । सां नटषट कृष्णहि के जानो ॥
 अष्ट कैन्या लिखी चित्र सारी । तिन कहँ कृष्ण जो यहि विधिमारी ॥

साखी-मारिन सब जेती हती, कृष्ण काल बरि यान ॥

तब अपने मन में गुनौ, करो उदधि अस्थान ॥

चौपाई ।

बधिक देव घात संधाना । बालि बैरको भाव जो जाना ॥
 जम सब प्राण घेर लै गयेऊ । मारयो कृष्ण मूर्च्छित भयेऊ ॥
 निरंकार निरंजन राज । आपहि मारि जो ताहि नसाऊ ॥
 बालि काबैर व्याध जब लीन्हा । यह तो भेद न काहु चीन्हा ॥
 तीन लोक के कृष्ण भुवारा । रहै ना बैर जीव व्यवहारा ॥
 जो जीव आप स्वारथहि मारा । सो जीव अपनौ किमि निस्तारा ॥
 तबहि कृष्ण अस मता बिचारा । तत्त्व मता अस रूप संहारा ॥
 जादव रूप कृष्ण सब मारे । पारथ बान रहे सब हारे ॥
 गोपी रही जो प्राणहि प्यारी । तिन को कृष्ण येहि बिधि मारी ॥
 आये कृष्ण पहुँ अर्जुन बीरा । लाज न छाडै अत्र शरीरा ॥

साखी-कहँ कृष्ण सुन अर्जुन, छाडो यहि संसार ॥

हम तो जात हैं स्वर्ग को, इत परपंच अपार ॥

चौपाई ।

गये पारथ जहाँ चारों भाई । चलो वही जहँ यादो राई ॥
 कहै सन्देश सुनौ हो राज । यहवाँ मोर दरश नाहिं पाऊ ॥
 मृतुं मंडल नहिं मेटव मोही । छाडौ महि बोलों अस तोही ॥
 छाडौ राज पाट सब भाई । पुत्र राज देख सब जाई ॥

चारेउ पांडव काल बश भयेऊ । राय युधिष्ठिर सदेह तब गयेऊ ॥
ता कहँ बड शासत जो कीन्हा । नाम विना देखो अस चीन्हा ॥
देखत कृष्ण अपन तन त्यागा । चिता तासु की रचन जो लागा ॥
चन्दन काष्ठ तासु तन जारा । चल भयो काष्ठ समुद्र मझारा ॥
इंद्र दवन हरि सपना दयेऊ । तिन पुनि काष्ठ आन धरि लयेऊ ॥
मूढायो द्वार काहु नहिं जाना । ठक २ उठै दिन रात प्रवीना ॥
शिशुपाल भुजा चार रहो जाही । मारयो कृष्ण जो भक्ष्यो ताही ॥

साखी-सबै अंग सम्पूर्ण हैं, जगन्नाथ को भाव ॥

शिशुपाल की भुजा उखारी, ताको बैर दिवाव ॥

चौपाई ।

दोई भुजा काष्ठ जेहि उरेहा । बैर न छूटे सो गहि देहा ॥
जो कोइ जीव जोर कर मारा । तासु जन्म किमिहो निस्तारा ॥
राम कृष्ण तैं को बड आही । बैर घात तासों न रहाही ॥
कृषी करै किसान जस भाऊ । ऐसी दसों जनम निर्माऊ ॥
दसों जनम ऐसे ही बीते । तासों कहै कि मुक्ति करीते ॥
बूझों नहिं चरित्र भगवाना । तीन जुग गये काल नियराना ॥
है बड ठाकुर ज्योतिं स्वरूपा । तिन सब रच्यो मही औ भूपा ॥
आप स्वार्थी तिनहु मारे । ज्यों नकटी विश्वासहि बारे ॥

साखी-जस सिरदार मही को, करै चरित्र भुवार ॥

जहँ तहँ शील पटावै, मल्ल बली तब धार ॥

चौपाई ।

कलियुग अन्त मलेच्छ व्यवहारा । तब हरि निष्कलंक अवतारा ॥
मारहिं मलेच्छ सबै पुर कैसे । पावक मध्य तृण है जैसे ॥
पावक रूपनि कलंक अवतारा । तून समान मलेच्छ संहारा ॥
बहुर कलंकी ज्योति समाई । कौतुक करै निरंजन राई ॥
ऐसे दसों जन्म निर्माये । निरंकार पुनि ताहि सताये ॥

धर्मदास वचन ।

धर्मदास कहैं सुनों गुसाई । दसों जन्म कहि मोहि सुनाई ॥
 कलष अनेक निरंजन राजा । आगे कैसा करि है साजा ॥
 सो सब स्वामी मोहि जनाओ । उत्पति प्रलय भाव बताओ ॥
 उत्पति प्रलय सुनों तुम पाही । कहौ सबै जो संशय जाही ॥

साहिब कबीर वचन ।

चारों युग हैं रहट स्वभाऊ । सो अब तोहि कहौ समुझाऊँ ॥
 चारों युग अंत जब होई । वर्षे अग्नि निरंजन सोई ॥
 पृथ्वी जार करै सब पानी । रहै स्वर्ग सो कहौ निशानी ॥
 रह जो देव तेंतीस करोरी । रहै जब तपसी तपकी जोरी ॥
 चंद सूर्य तारा गण झारी । जबई देह तजै मुख चारी ॥
 विष्णु बीतही दस अवतारा । नहिं शिव बीत जोग जो धारा ॥
 यहि बिधि बहत्तर चौकडी जाई । सेवा फल पावै अन्याई ॥
 उत्पति करै पुन प्रथम स्वभाऊ । ऐसे भवसागर निर्माऊ ॥

छंद—महा प्रलय जब किया निरंजन अग्नि सेवत ना रहो ॥

लोमस ऋषितब होय अंतहि शशि भानु पानी सब गयो ॥

तीन गुन पांच तत्त्व बीते दस चार सुत आकाश हो ॥

महा देवी आदि कन्या ताही करै वह गरास हो ॥

सोरठा—सब भक्षै निरंजन राय, आदि अंत ना कछु रहै ॥

शिव कन्यानाम बिहाय, सब जी राखै आपमें ॥

चौपाई ।

सतगुरु दया जाहि पर होई । नाम प्रताप बाचै जन सोई ॥

निज घर हंसा करहि पयाना । और सकल जीव तहां समाना ॥

जाई रहैं जहां धर्महि द्वीपा । प्रथम करी जो लोक समीपा ॥

उत्पति कारण सेवा करहीं । पुनियहि भांति सृष्टि अनुसरही ॥

भक्त अभक्त सबै पुनि खाई । सबको भक्षै निरंजन राई ॥
सो पुनि महिमा वेद बखाने । वेद पढे पर भेद ना जाने ॥

छंद-जेहि को भरोसा सोई चुरावै कहो तब कैसी बने ॥

सेवा करें जेहि पुरुषकी सो भक्षण प्रति दिन करै ॥

जानी कै बूझै नहिं केतो कहो समझाय हो ॥

आदि अंत सबै ग्रसै अस निरंजन राय हो ॥

सोरठा-काल सबनको खाय, हरि हर ब्रह्मासे सबै ॥

बाचै कौन उपाय, एक नाम जाने बिना ॥

धर्मदास वचन-चौपाई ।

धर्मदास टेके गहि पाऊ । हे स्वामी मोहि भेद बताऊ ॥

कैसें आयो यहि संसारा । सो कहिये मोसों व्यवहारा ॥

साहिब कबीर वचन ।

सत्य युगमें कबीर साहबका पृथ्वी पर प्रकट होना ।

सुन धर्मनि मैं तोहि बताऊं । लोक छोडि मैं इहँवां आऊँ ॥

सतयुग सत सुकृत मम नाऊं । सोई सबै तोहि समुझाऊं ॥

इंस उबारन आयेउ जबही । मथुरा नगरहि पहुँचे तबही ॥

गुरुमठ मांझ जो आसन कीन्हा । रक्षो अंत मोहि काहु न चीन्हा ॥

कहौं भक्ति बहु भांति टढाई । बिन अंकूर न जीव जगाई ॥

बिबसी नाम रहै इक रानी । ज्ञानवंत औ वरण कुंवारी ॥

तासों कझो भक्ति परमाना । बिबसी सुनै अचंभौ माना ॥

बिबसी वचन ।

साखी-अचरज कही तुम स्वामी, लोक वर्ण उजियार ॥

पहिछे लोक दिखाओ, पीछे हो इतबार ॥

चौपाई ।

तब हम मता अस कीन्हा । ताके शीश हाथ जो दीन्हा ॥
 परसत शीश ताकर भय भागा । शून्य मंदिरमें मुहरा जागा ॥
 देखत सुरति निरति सौ लोका । बिबसीका मेढ्यो सब धोखा ॥
 हे स्वामा अब कोजे दाया । यमक घरसे जीव मुक्ताया ॥
 बार अनेक बिनय तिन कीन्हा । तब हम नाम लखाई दीन्हा ॥
 भक्ति भावसों करै अनंदा । ज्यों चकोर पाये निशि चन्दा ॥
 ताके गृह निंदक सब रहइ । बिबसी देखत ही पर हरई ॥
 साखी-जाके पाछे हंस जो उबरे, तिनहिको जो बताव ॥

हंस ग्यारह आएऊ, गुरुसे कीन्ह भिटाव ॥

चौपाई ।

तिन कह सत्त शब्द जो दीन्हा । परम पुरुषके दर्शन कीन्हा ॥
 तब उठि गयो पुरुषके ठाउँ । सतयुग सत सुकृत मम नाउँ ॥
 आवत जात लखे नाह कोई । आज्ञा पुरुषकी जापर होई ॥

त्रेतायुगमें कबीर साहबका प्राकट्य ।

त्रेतायुग आयो पुनि जबही । युग अनुमान चलो मैं तबही ॥
 नाम मुनिंद्र धरो निःशंका । प्रथम जाय देखेउ गढलंका ॥
 द्वारपाल सों कहि समुझाई । राजाको ले आव बुलाई ॥
 सुन प्रतिहार कह अस वानी । रावन मरम सिद्ध नहिं जानी ॥
 महा गर्व कछु गिनै न आनो । शिवके बल कछु शंक न मानो ॥
 मारहि मोहि कहाँ जो जाई । गर्व प्रहारी है रावन राई ॥

मनींद्र वचन ।

जाहु तुरत कहा सुन मोरा । बार बंक नहिं होवहिं तोरा ॥
 प्रतीहार जब बात सुनाई । सिद्ध एक है ठाठ गुसाई ॥
 सुनि नृप क्रोध अनल सम कीन्हा । प्रतीहार तुम मति अति हीना ॥
 भिक्षुक एक जो मोहि बुलावै । शिव सुत मोर दरश नहिं पावै ॥

साखी—कहा रूप तेहि ऋषीकर, मोहि कहो समझाय ॥

जो मांगे सो देव वहि, लेइ बहुर घर जाय ॥

चौपाई ।

हे प्रभु आहि सेत जो भाऊ । सेत अंग जैसे शशि राऊ ॥
माला तिलक बदन है सेता । कहै नृपति कोई आहि अजेता ॥
मन्दोदरि कहै सुनो हो राजा । ऐसा रूप और नहिं झाजा ॥
सेतु रूप महिमा मैं जानौं । निश्चय है कोई पुरुष पुरानो ॥
जाई तुरन्त गहौ तुम पाऊ । होउ अकल सुन रावन राऊ ॥
दस सिर बचन सुनत परजरेऊ । जरत हुताशन जनु घृत परेऊ ॥
चलि भयो असुर अनिल सम चीन्हा । बहुत बेग मनमें अस कीन्हा ॥
सत्तरबार खड्ग सो चलावा । तब हम ओट तृणकी लावा ॥

साखी—तृण ओट जेहि कारणें, गर्व परिहरौ राव ॥

तृण जबही ना टूट्यो, राजहि शोकजनाव ॥

चौपाई ।

कह मन्दोदरि गहि मम पाऊ । गर्व ना छाडै रावन राऊ ॥
शिव की सेव करै मन मानी । अटल राज दीन्हा तिन ठानी ॥
तब चलत हम कही अस बाणी । मूढ नृपति तुम मर्म न जानी ॥
सुनु रावण जो लंक मझारा । सब कहँ रामचन्द्र जो मारा ॥
काहू मुक्ति गम्य नहिं पाई । तातें मैं कछु कहों बुझाई ॥
तो कहँ भक्षहि काल अन्याई । काचा मास स्वान जिमिखाई ॥
काल भक्ष जिव सबहि निदाना । अधिक तोर कछु मरदै माना ॥
अगिला जन्म तोर होइ जबही । भक्षी कृष्ण देख पुन तबही ॥
उनसै करिहो बहु अभिमाना । ताकर तोहि कहा परवाना ॥
तृण नहिं टूटो बल तुम बूझा । आगै कहा तोह बल सूझा ॥
बालि नाम इक कपि जो होई । रख छह मास तोहि कहँ गोई ॥
तिनकी कांख रहिहौ छै मासा । ऐसा कहँ पग कीन्ह प्रकाशा ॥

साखी-रावण को अपमान करि, अवध नगर चलि आय ॥

दशा सन्त की जान कै, मधुकर पकरै पाय ॥

प्रसंग चौपाई ।

नमस्कार कर गहि लिये पांऊं । बाल गोपाल चरण तर नाऊं ॥
ताकी प्रीति नीक मैं जाना । तासौं लोक संदेश बखाना ॥
तिन कीन्ही विन्ती बहुवानी । हे प्रभु देखों लोक सहिदानी ॥
लैकर चले पंथ तेहि जहँवा । पांजी एक रहे धर्म तहँवा ॥
देखि ताहि दौरे यम दूता । कहां ले चले विप्र को पूता ॥
कहँ मुनींद्र सुनो यमराई । इनको जिन रोकौ तुम आई ॥
जाकर दूत जाव तेहि पासा । पाछे करो बैर की आशा ॥
ब्रह्मा विष्णु शिव आज्ञा देही । तीन लोक महँ जिव गहिलेही ॥

साखी-छोड देव यह मारग, तुम अब आहु कौन ॥

यहां कोई नहिं आवै, तुम कह करत हो गौन ॥

चौपाई ।

तब मुनींद्र अस बोले लीन्हा । होहु दूत तुम सब बल हीना ॥
शब्द प्रमाण न होइ बल थोडा । दूतन जीतें गये महि ओरा ॥
तिन को दिव्य दृष्टि कर दीन्हा । तहँवा जाय लोक तिन चीन्हा ॥
देखि स्वरूप सुरंग अपारा । झलके जोत जहां उजियारा ॥
देखत मधुकर बहुत प्रतीती । हे स्वामी तुम यम कहँ जीती ॥
मो कहँ दीजे शब्द दृढाई । जेहिते हम परम पद पाई ॥
अति आधीन देखा मैं जबही । नाम दृढाय दियो तेहि तबही ॥
अति आधीन जो बोल स्वभाऊ । मोरे गृह अब धारो पाऊ ॥
ताके गृह आयो मैं जबही । सोरा जीव शरण भये तबही ॥

साखी-मधुकर जेते जीव सब, लोकहि कीन्ह पयाम ॥

तातैं नाम मुनींद्र कहि, जीव सत्त दियो दान ॥

चौपाई ।

तब हम गये आप सुख सागर । अभै पक्ष जहँ नाम उजागर ॥
बिन्ती वृंढवत कीन्ह अनेका । पुहुप द्वीप द्वीपन को थेगा ॥
क्रीडा बिनोद होत बहु भावा । द्वापर युग धर्म न नियरावा ॥

द्वापारयुगमें कवीर साहेबका प्राकट्य ।

आज्ञा पुरुष दीन्ह मोहि सारा । ताते बहुरि नाम उर धारा ॥
करुणा मय मम नाम प्रकासा । बहु जीवन कहँ छुड़ायो फांसा ॥
आयो जहँ चन्दबिज बडराऊ । गढ गिरनार नगर तेहि ठाऊ ॥
ताकी नारि रहे व्रतधारी । पूजै साधु कुल लाज विसारी ॥
तिन पुनि सुधि सो हमारी पाई । लैगयी बहु विधि तुरत लिवाई ॥
आई चेरि बिन्ती कीन्हा । तुव दर्शन रानी चित दीन्हा ॥
मैं नहिं राजा रावकर जाऊं । उठ रानी आपहि चलि आऊ ॥
नमस्कार कै कहिं अस वानी । मोरे गृह पशु धारौ ज्ञानी ॥
ताकी प्रीति नीक मैं जाना । राजागृह तब कीन्ह पयाना ॥
रानीकह उपदेश जो दीन्हा । राजा कर कछु शंक न कीन्हा ॥

साखी—एक दिवस जो रानी, बूझा मता अपार ॥

कहा मता तुम ज्ञानी, सो कछु कहो बिचार ॥

रानी इन्द्रमतीकैं कवीर साहेबसे ज्ञान चर्चा करना—चौपाई ।

तासो कह्यो सुनौ हो रानी । अधरहि रहौं नाम मम ज्ञानी ॥
जो कोइ माने कहा हमारा । ताको पठऊं जम सों न्यारा ॥
कहे रानी मोहि कीजे दाया । जातैं नहिं हते यमराया ॥
बहुत भांति तत्त्व जो चीन्हा । बहु विधि बिन्ती मुक्ति अधीना ॥

कृष्ण विष्णु व्यवहार ।

सोवत कृष्ण स्वप्न इक देखा । बहु बैकुंठ सेत जनु रेखा ॥
उग्यो बादल सेतहि फूला । सपना देख कृष्ण मन भूला ॥

अहो ब्रह्मा मैं सपना देखा । बादल उमंग पटुप की रेखा ॥
 सोवत देखा पुर में अपना । ब्रह्मा वेद देख कहु सपना ॥
 रास वर्ग गनि मोहि बताओ । जेहि ते जीवका भर्म मिटाओ ॥
 तब पुनि ब्रह्मा वेद बिचारा । पुनि भाष्यो ताकर उपचारा ॥
 सुनो विष्णु समझाऊं तोही । यही आज्ञा भयी सो मोही ॥

साखी-है कोई ज्ञानी जीव बडा, तेहि कारण प्रभु आव ॥

दूत ताहिं नहिं पावई, सत्त पुरुष सुन नाव ॥

चौपाई ।

सुनिके विष्णु अचरज मन कीन्हा । ब्रह्मा सों तब बोले लीन्हा ॥
 सोइ करौ जो जीव न जाई । राखौ ताहि महि भरमाई ॥
 सुनि के ब्रह्मा मतौ बिचारा । तक्षक रूप दूत पगु धारा ॥
 यह सब भेद जबै हम जानी । इन्दुमती सो आज्ञा ठानी ॥
 काल रूप तक्षक को आही । डस है तोहि जो कष्ट जनाई ॥
 बिरहुलि शब्द गहौ मन लाई । यम को दूत जीति नहिं जाई ॥
 रानी शब्द बिरहुली पाई । ता कहँ तब प्रतीति मन लाई ॥
 बहु बिधि सुमरै शब्द अघाई । काल घरी निकटै है आई ॥
 चारौ दूत पठाय यम राऊ । गढ गिरनार बेग चल आऊ ॥

साखी--रानी भक्ती लीन्ह मन, काल न पावै दाव ॥

साध चले घर आपने, रानी मस्तक नाव ॥

चौपाई ।

राजा रानी दोई शिष्य मोरा । रानी लीन्ह राव मति भोरा ॥
 तब यमदूत मता अस कीन्हा । चित्रसारमें पहुँचे लीन्हा ॥
 रानी चली सिज्या पर जबहीं । तक्षक ग्रास भर्म भयो तबहीं ॥
 रानी कहे डस्यो मोहि सांपा । राजा कियो कठिन संतापा ॥
 मंत्री गुणी सब तुरत बुलाये । राजा आज्ञा सों सब आये ॥

रानी शब्द बिरहुली भाखा । दूर २ सबदिन को राखा ॥
रानी क्रोध बहुत तब कीन्हा । बहुत होय नृप अति आधीना ॥
अरे भाई मम प्राण प्यारी । यही बार तुम लेव सम्हारी ॥
मूर्च्छित रानी सब चलि आये । जाग्रत जान के सबै सिधाये ॥
तक्षक विष नहिं लाग्यो नारी । अंतक दूत रहे सब हारी ॥

साखा—रानी उठि ठाढी भई, राजहि हरष अपार ॥

सुमिरन हम को कियो, धन्य है गुरू हमार ॥

चौपाई ।

तक्षक राव तब आये जहवां । ब्रह्मा विष्णु महेश्वर तहवां ॥
विष को तेज शब्द सों जीता । सुनि के विष्णुहिं भयी तब चिंता ॥
धर्मराय का तुरत हंकारा । यम दूतन को जो सिरदारा ॥
ताका हरि अस मता सुनावा । करियो सबै तुम सेतहि भावा ॥
आने छलिकैं जो नृप नारी । निश्चय आज्ञा आहि हमारी ॥
सुनिके दूत भेष कियो रंगा । अपन कीन्ह सब सेतहि अंगा ॥
आये दूत नगर नियरावा । रानी ऐसा सपना पावा ॥
आये गुरू ज्ञानी जा हमारे । बोलत अमृत वचन सुधारे ॥

ज्ञानी वचन ।

सुन रानी तोहि भेद बताऊं । काल चरित्र सब तोहि सुनाऊं ॥
छलबे अइहैं ताहि सम्हारो । सेत रूप जिन भाव विचारो ॥

साखी—मस्तक ऊंचा काल का, चित्त में गुण का रंग ॥

यहि चिह्न तुम चीन्हियो, और सेत सब अंग ॥

भये प्रभात काल तब आवा । सत रूप सब अंग बनावा ॥
आये जहां तहां नृप नारी । तिनसों ऐसो वचन उचारी ॥
चीन्हत है कै नाहीं रानी । मरदन काल आइसमैं ज्ञानी ॥

मैं तो तोकह दीक्षा दीन्हा । तक्षक डसै तोहि कहैं लीन्हा ॥
 तब तोहि मंत्र दियो मैं सोई । काल को अजय जाहितें होई ॥
 तें पुनि तैसो तत्त्व बिचारा । इर्षत भये तब धनी तुम्हारा ॥
 बेगी चलो गहर जिन लाओ । प्रभु को दरस तुरत तुम पाओ ॥
 इंदु मती सपना जो देखे । बैसो देखो ताकर रेखा ॥
 तीनों गुण चक्षू में राता । और पुन देखो ऊँचा माथा ॥
 और स्वेत सब देख्यो अंगा । पाइ प्रतीत स्वप्न परसंगा ॥
 अरे काल तैं क्या ठग मोही । इंस रूप नाह छाजै तोहि ॥
 यह छल मता न लागु तुम्हारा । है समर्थ बड गुरु हमारा ॥

साखी—मम गुरु की परतीत यह, धरनी धरै न पांव ॥

काग न होय मराल सम, यह छति तोहि न भाव ॥

चौपाई ।

सुनि, के दूत कीन्ह तब रोषा । इन्दुमती को दीन्ह सो दोषा ॥
 तिनि पुनि सुमरे अपने स्वामी । भक्त हेतु चले अन्तर्यामी ॥
 ज्ञानी आवत काल पराना । ता कहैं लै पुनि लोक सिधाना ॥
 धन्य भाग तिन रानी केरा । ज्ञानी आय काल सों फेरा ॥
 रानी मानसरोवर आई । अमी सरोवर ताहि दिखाई ॥
 कैबीर के सागर पांव परोजबही । सुरति सागरै पहुँची तबही ॥
 पहुँचत तासु इंस हरषाने । सब मिलि कीन्ह तासु सन्माने ॥
 सतगुरु दाया कीन्ही जबही । षोडश भातु रूप भयो तबही ॥
 भयो इर्ष रानी अति शोभा । राजा लग्यो करन अति क्षोभा ॥
 हे सतगुरु मैं तुम बलिहारी । राजहि आनो पतहि हमारी ॥
 सतगुरु कहैं सुन संत सुजाना । राजे भौव भक्ति नहि जाना ॥
 आ तोहि भयो इंसको रूपा । कारण कवन चहै तू भूषा ॥

साखी-राजा भक्ति न जानही, तातें हंस न आव ॥

बिना तत्त्व नहिं हिरम्बर, हंस न होय भुक्ताव ॥

चौपाई ।

हे स्वामी में भव जब रहिया । राजा भक्ति न बरजै कहिया ॥
है संसार का ऐसा भाऊ । पुरुष पराय ध्यान नहिं आऊ ॥
जो कोइ राते त्रिया बिरानी । ताकी करै सबै मिलि हानी ॥
छोटे बड़े को यह व्यवहारा । धन्य नृपति जिन ज्ञान बिचारा ॥
करो साध सेवा में जबही । राजा मोहि न बरजै कबही ॥
जो राजा अटकावत मोहीं । कैसे भेटत तब मैं तोहीं ॥
धन्य नृपति जिन भक्ति दृढावा । आनिय ताहि हंस पति रावा ॥
सुनि ज्ञानी ताही की बाता । चले तबहि तहँही बिहँसाता ॥
आये भवसागर जब ज्ञानी । यहां नृपति की अवध खुटानी ॥
आये लेन ताहि यमदूता । राजहि कष्ट जो देत बहूता ॥

साखी-हंस ताको नहिं पावे, घेर रहो जो राव ॥

राजा परो अगाध में, सतगुरु को गुहराव ॥

चौपाई ।

राजा तत्त्व मता नहिं चीन्हा । ताते यम राजन दुख दीन्हा ॥
पावे यम नहिं छाडे ताही । भक्ति योग जो ऐसो आही ॥
तब ज्ञानी आये तेहि ठाई । देखत जीव बहुत संकाई ॥
ज्ञानी लिन्ह जीव कर आगे । देखत दूत ताहि सब भागे ॥
दूत चहुँ दिशि देखत जावैं । मरकट दृष्टि पक्षि नहिं पावैं ॥
जस आकाश कहँ जाय पखेरू । मरकट दृष्टि आये सत हेरू ॥
ऐसे ताहि दूत गुहरावै । नहिं जब देखैं तब पछतावै ॥
जहाँ लगि गम तहँ लग हेरा । आगे देखा धुन्ध कुहेरा ॥
हंस गये जब लोक द्वारा । रूप अनूप देख रजियारा ॥
गये नृपति हंसन की पांती । तामध्ये पुन जइस अजाती ॥

साखी--रानी चीन्हौ नृपति को, आन धरे तब पांव ॥
 नृप मन में बहु संकुचै, लज्जा ताहि जनाव ॥
 चौपाई ।

कह रानी सुन साधु भुवारा । चीन्ह नृपति में हौं तुम दारा ॥
 इन्दुमती है मेरा नाऊँ । यहि कारण टेक्यौ तुव पाऊँ ॥
 राव कहे किंमि करों प्रमाणा । बर्ण तुम्हारो हंस समाना ॥
 शोभा बहु देखों तुम अंगा । कैसे तोहि कहों अर्धंगा ॥
 हंस करुणामय वचन उचारा । निश्चय मानो वचन हमारा ॥
 हंस रूप होवे नर नारी । जिन भवसागर भक्ति विचारी ॥
 नृप को भयो हंस को भावा । जिन पुनि ऐसी शोभा पावा ॥
 भुईं में रहें जो अंतक दूता । तिन पुनि विस्मय कीन्ह बहूता ॥
 दूत चलि गये जहँ त्रिय राऊ । तिन सों जाय कह्यो सत भाऊ ॥
 स्वामी श्वेत बरण यक आवा । रानी नृप लेइ लोक सिधावा ॥
 कैसो लोक ब्रह्मा परजरेऊ । जरत हुताशन जनु घृत परेऊ ॥
 चलो हरी हर संग हमारे । जहँवा राजा रानी सिधारे ॥
 चले बेग तब तीनो भाई । बाहन साज चले तिय राई ॥

साखी--सुम्मेरते ऊँचे गये, तब देखा अँधियार ॥
 नव खंड महि तब छाँडिके, आगे को पगधार ॥

चौपाई ।

पहुँचे विषम सरोवर जाई । बिजुली हुआ ह्यां अन्याई ॥
 ब्रह्मा शिव बाहन थकि गयऊ । सतगुन तेज विष्णु का भयऊ ॥
 अलख निरंजन भयो तिहिठाऊँ । औ देवी तें आशिष पाऊँ ॥
 तेहि ते विष्णु गो अँमर जहँवा । कामिनि मान सरोवर तहँवा ॥
 देखत रूप विष्णु मन भूला । श्वेत पुष्प पद्म जस फूला ॥
 कामिनि मान सरोवर राजै । जुत्थ २ जोड भल साजै ॥

नर अध्रान तहां तिन्ह लागी । सत्त सुकृत बोले अनुरागी ॥
सब मिलि भयो अचंभो बाता । ऐसा अचरज नरको बाता ॥
कोई कहे नर देख पखेरू । ऊंची दृष्टि सबै मिलि हेरू ॥
बेग निकारौ यहां तै आजू । रहन न पावै करौ सों काजू ॥

साखी—दोई सठहार जो भेजे, नर से कहो बुझाय ॥

छांडौ मान सरोवर, यहां नहीं तुव ठाय ॥

चौपाई ।

प्रतिहारन तब आज्ञा कीन्हा । तिन सों हरि अस बोलन लीन्हा ॥
देखा चाहों तुम पुर पाटन । हे प्रभु भेद कहो कछु आपन ॥
तब प्रतिहार कहें समझाई । नर को रूप दरश नहिं पाई ॥
जौ लग बीरा नाम नहिं पावे । सो जीव कैसे लोक सिधौवे ॥
भयो जो बडो निरंजन राऊ । तेऊ यहां रहन नहिं पाऊ ॥
जातू विष्णु कहा सुन मोरा । नातर चक्षु हीन होय तोरा ॥
चले विष्णु तब लागि न बारा । हरि कमलासो मंत्र बिचारा ॥
यह कछु बात अचंभो आही । कहत न बनै रूप मोहि पाही ॥
देख सठिहारन बेग निकारा । चले जीव जहां राज तुम्हारा ॥
अचरज बात कही नहिं जाई । धन्य पुरुष जिन लोक बनाई ॥
जब मैं ध्यान धरा प्रभु केरा । अलख रूप देखौं बहुतेरा ॥
ऐसा रूप कहूं नाह देखा । अचरज भयो न जाय विशेषा ॥

साखी—चले ब्रह्मा हरि शंकर, छाडि लोकके खोज ॥

बस शशि के परभाव तैं, सकुचन होत सरोज ॥

कलियुगमें कबीरसाहिबका प्राकटय—चौपाई ।

सतयुग त्रेता बीत जब गयेऊ । कलियुगको प्रभाव तब भयेऊ ॥
छाड्यो लोक लोककी काया । प्रथमहि मान सरोवर आया ॥

पाँच तत्त्व तीन गुण साना । त्रिगुण रूप कीन्ह उतपाना ॥
 रूप मनुष्य सुदेह सम्हारा । नहिं लेई अहार व्यवहारा ॥
 जो कोइ ये बिधि करै उछेदा । सो तो है करता को भेदा ॥
 जो कोइ ये बिधि करै उछेदा । सो तो है करता को भेदा ॥
 करता देह तबै निरमावा । तामहिं तत्त्व प्रकृतिहि स्वभावा ॥
 आयो निरगुण काछ शरीरा । आवा गमन की मेंटन पीरा ॥

जगन्नाथके मंदिरकी स्थापना ।

प्रथमहि आया सागर तीरा । जगन्नाथ जहँ काष्ठ शरीरा ॥
 जाते परम वचन मैं हारा । बाजी मांड किया प्रतिपारा ॥
 आसन वेल तीर मैं लीन्हा । सो स्वरूप काहू नहिं चीन्हा ॥
 आयो राम बिप्रके रूपा । तासों कथि कह्यो अजगूता ॥

साहेब कबीर वचन ।

साखी-बाचा बंध मैं आइया, मंडप उठि है तोर ॥

मान त्रास सिंधू जबे, दर्शन देखै मोर ॥

चौपाई ।

तो कहँ थापौ वचन प्रवाना । तीन लोक तुम करत बखाना ॥
 तो परसै को कहा अधिकारा । सोई कहौ तुम बौद्ध बिचारा ॥

बौद्ध वचन ।

मन बच क्रम परसै जां मोई । कोटि जन्म लगि बिप्र सो होई ॥
 औ पुनि विद्या औ धनवंता । यहि सुनकै जो भयो हरषंता ॥

साहिब कबीर वचन ।

आवा गवन निरवारन आयो । सत्त शब्द ते जीव छुडायो ॥
 जो बहु जन्म थाकौ तुहि पाहीं । कैसे जीव लोक तब जाहीं ॥
 बिना नाम नहिं जीव उबारा । कहि अब भाखौ कछु उपचारा ॥
 मारकंडे तर जाइ नहाई । अस हँस बोले त्रिभुवन राई ॥

अक्षैबट कृष्ण रोहिनि अस्नाना । इन्द्र दमन समुद्र अस्थाना ॥
यदि विधि तीर्थ करै मन जानी । पुनर्जन्म ना होवै प्रानी ॥

साखी-हँसै कृष्ण छठ मता कहि, जिमि माहुर को मीठ ॥
अस पुरुषोत्तम क्षेत्र फल, ज्ञानवंत कहँ दीठ ॥

चौपाई ।

समाधान हरिको जब कीन्हा । आसन उदाधि तीर में लीन्हा ॥
चौरा कीन्ह तहाँ पुन जाई । इन्द्र दमन तब आज्ञा पाई ॥
जबहीं मंडप काम लगावा । सागर उमंग खसावन आवा ॥
उठावहु मंडप करि निःशंका । उदाधि त्रासकी मेटव शंका ॥
आयो क्रोध लहर जब पानी । मेट्यो पुरुषोत्तम सहिदानी ॥
लहर उमंगी सागर तीरा । आय जहां तहँ सत्त कबीरा ॥
देखत दरस महां भय मानी । बोल्यो वचन जोर युग पानी ॥
हे स्वामी तुव मर्म न जाना । जगन्नाथ वर किया पयाना ॥
क्षमौ अपराध मोर प्रभुराया । लेउ बैर अस कीजे दाया ॥
तासौं पुनि अस बचन उचारा । बोर द्वारिका बैर तुम्हारा ॥

साखी-राम रूप सायर बँध्यो, तातैं उदाधि उमंग ॥

बोरौ नगर द्वारिका, भयो रुचिर परसंग ॥

चौपाई ।

तब तैं उजर द्वारिका भयऊ । पंडनको तब स्वप्ना दयऊ ॥
आये मोपर साहिब कबीरा । आवा गमन की मेटन पीरा ॥
ऐसा स्वप्न पंडन दीन्हा । तीर्थ स्नान तेहि सब कीन्हा ॥
उठ्यो जो मंडप बाज बधावा । कनक उरे नहिं हाथ बनावा ॥
एक दिना कौतुक अस भयऊ । सागर तीर पंडा चलि गयऊ ॥
करि असनान चलो मंडप पासा । मन में ऐसा बचन प्रकाशा ॥
प्रथमहिं चौरा म्लेच्छ को गयऊ । ठाकुरके नहिं दर्शन कियऊ ॥

तेहि के मन पाखंड जब देखा । किय कौतुक सो कहौ विशेषा ॥
 जहँ लग मंडप पूजहि बीरा । तहँ लग देखहि रूप कबीरा ॥
 गयो जहां कठ सूरति आहीं । कबीरको रूप भयो तेहि पाहीं ॥
 अच्छत पुहुप लै विप्र मन भूला । नहि ठाकुर जो पूजहु फूला ॥

साखी-तब पंडा सिर नायो, प्रभु चरित्र अवगाह ॥

क्रोध छोडिये स्वामी, कृपा करौ मोहि पांह ॥

चौपाई ।

अपने मन आन्यो प्रभु हीना । तातैं प्रभु तुम कौतुक कीन्हा ॥
 तासौ बचन मैं बोलिये लीन्हा । सो पंडा पुनि कही जां कीन्हा ॥
 सुनहु विप्र तुम्हे आयसु होई । दुबिधा भाव करौ मत कोई ॥
 ब्राह्मण छाडहु जात अजाती । ताते मेटब सबकी फांसी ॥
 भोजन माहि भर्म जो करहीं । ताकी अंग हीन अनुसरही ॥
 तब पंडा विन्ती अस ठाना । हे स्वामी मैं तोहि न जाना ॥
 करौ सोई जो आज्ञा दीजे । कछुजांचों सो प्रदान मुहि कीजे ॥
 जो मन इच्छा होय तुम्हारी । देउ सोइ अस बचन उचारी ॥

साखी-सागर नीर बड खारा, सो तो ग्रसो न जाय ॥

निर्मल जल मैं मांगौं, सो दीजे प्रभुराय ॥

जहँ चौरा है सागर तीरा । खनहु कूप होय निर्मल नीरा ॥
 तहां खनायो आय तब कीन्हा । जल मँगाय पंडन कहँ दीन्हा ॥
 कूप बनायो साथर तीरा । तहां भयो पुनि निर्मल नीरा ॥
 यह तो भेद जाने सोई संता । कबीर सागर बूझै मतवंता ॥
 इरी भेद मैं सागर आयो । तेही सकल चरित्र सुनायो ॥
 भृंगी को कीन्ही मैं दाया । ताको एक जो भेद बताया ॥
 ताको दियो मता कड हारी । जीव भेद सों लेत उबारी ॥

पठवै जीव नाम दे जहँवा । मुक्ति पदार्थ फल है तहँवा ॥
चार भानु कामिन उजियारी । मान सरोवर है वह नारी ॥

धर्मदास वचन ।

धर्मदास कहै अस बानी । स्वामी कहू संत उत पानी ॥
हंस रूप जो षोडश भाना । कामिनि चार भानु परवाना ॥

साखी-कारण कौन है कामिनि, चार भानु कछु थोर ॥

शब्द गहे सब हंसा, संशय भई जब मोर ॥

साहिब कबीर वचन-चौपाई ।

सुन धर्मनि में तोहि बताऊँ । यह सब भेद मैं तोहि बुझाऊँ ॥
चौरासी लख जोइन ठाना । मुक्ति छत्र नरको उत्पाना ॥
ताते प्रभु प्रगटे नर भाऊ । ताते शोभा हंस बहु पाऊ ॥
आय अदेह पुरुष रह जहँवा । नर को रूप प्रगट भये तहँवा ॥
जेहि मुक्ति चंदा निर्माई । हंस प्यार मुक्ति अधिकाई ॥
भृंगी कीट शिष्य जो होई । पावै भेद मग्न होय सोई ॥
सिंधु मध्य राह तिन केरा । आवै जीव ताहि सों फेरा ॥
वहै राह भृंग राज कहँ दीन्हा । यही भेद विरले जन चीन्हा ॥
पाहै भेद सन्त जन सोई । आन्यो सतगुरु गम जेहि होई ॥
निज बीरा जो चौरा पावै । इकोतर सौ जीव लोक सिधावै ॥

साखी-यही चरित्र करि आयो, चौरा के व्यवहार ॥

निज बीरा जो पावै, तब जीव होय उबार ॥

चन्दवारेमें प्राकट्य की कथा ।

चौपाई ।

आसन कर आयो चंदवारा । चंदन शाह तहाँ पगु धारा ॥
बाल रूप धर आयो तहँवा । आठै पहर रह्यो मैं जहँवा ॥

ताकी नारि गई अस्नाना । रूप देखि ताकर मन माना ॥
 लेगये बालक सो निज गेहा । बहुत भांति तिन कीन्ह सनेहा ॥
 चंदन साहु देखि रिसियाना । चलगयो नारि तोर अब ज्ञाना ॥
 बेग डार बालक को आजू । सुने लोग तो होय अकाजू ॥
 जाति कुटुम्ब सुने जो कोई । यह तो भली बात नहिं होई ॥
 चेरी हाथ तिन दीन्ह पठाई । उद्यान मांस तिन दीन्ह अडाई ॥

नूरीको मिलनेकी कथा ।

काशी में प्राकट्य ।

कछु दिन काया धर दुख पावा । यहि अंतर इक जुलहा आवा ॥
 नूरि नाम जो वा संग नारी । देखत बालक भई सुखारी ॥
 बालक देख नारि मन भूला । रविके उदय कमल जस फूला ॥

साखी--आति सनेह जिन कीन्हा, नूरी देख रिसान ॥

बालक लीन्हो नारि अब, कहा भयो अज्ञान ॥

बालक वचन--चौपाई ।

बालक दीन्ह मही महँ डारी । अस सुनि बालक दीन्ह हुँकारी ॥
 बूझो काल फांस नरनारी । पूर्व जन्म तेहि लीन्ह उबारी ॥
 पाछिलि प्रीति भयी अब मोही । तातैं दरश भयो अब तोही ॥

नूरी वचन ।

तुम जानो अब में नहिं जाना । सो अब मोहि सुनाओ काना ॥

नूरीके पूर्व जन्म की कथा ।

कबीर वचन ।

पूर्व जन्म तैं ब्राह्मण दूखी । तोरे गृह कबहु नहिं सुखी ॥
 श्वपच भक्त मम प्राणन प्यारा । ताको मान पिता अवतारा ॥
 श्वपच भक्ति करै पुनि जबहा । मात पिता पर लागै तबही ॥

ताकी प्रीति भक्त मन धारा । तातैं भयो विप्र अवतारा ॥
प्रथम प्रीति मोरे मन भावा । तोरे गृह मैं यहि विधि आवा ॥
तोसों कही इक भक्तिं दृढाई । राखौ मर्म हमार छिपाई ॥
देव सुवर्ण नित्य मैं तोही । एक मुहर पुनि ताकी होई ॥

साखी-बोलो नहिं यहि कारणें, तोहि मुक्ति नहिं भाव ॥

माया देख भुलानो, यहि कारण तब पाव ॥

चौपाई ।

घर नहिं रहो पुरुष औ नारी । मैं शिव सौं अस वचन उचारी ॥
आनि देव लक्ष्मी संसारा । आपन कोनिज भीख अहारा ॥
आन की बार बदत हो योगू । आपन नार करत हो भोगू ॥
काशी मरे जन्म नहिं होई । तुव महिमा वणैं सब कोई ॥
औ पुन तुम सब जगठग राखा । काशी मरै अजल तुम भाखा ॥
जब शंकर होवे तुव काला । कहां रहे तब भक्त बिचारा ॥
जीवन करत जो होय अकाजा । या शंकर तब तुम कहैं लाजा ॥
सुनि शंकर तब चलयो लजाई । यहि अन्तर जुलहिनि चलिआई ॥
हे स्वामी मम भिक्षा लीजै । सब अपराध क्षमा प्रभु कीजै ॥
एक पुत्र जो बिधि मोहि दीन्हा । कबहुं बात कहैं नहिं लीन्हा ॥

शंकर वचन ।

तोरे गृह पंडित अधिकारी । झूठ बोल कस बोलहु नारी ॥
हरि कमला सम देखो ज्ञाना । बुद्धिवंत तुम पुत्र सुजाना ॥

साखी-सुनकर महिमा पुत्रकी, नारि धरे तब पांव ॥

हे स्वामी मम इच्छा, श्रवणन बचन सुनाव ॥

चौपाई ।

कहा लजान कहा फिर आवा । बिहँसि कहा तुम सिद्ध कहावा ॥
सुनिकै वहै इर्ष बहु कीन्हा । भिक्षा कनक जाति को दीन्हा ॥

भिक्षा दै प्रसुदित चलि आई । इस्तामल को खोज न पाई ॥
 बाचा बन्ध तहाँ पुनि आयो । काल कष्ट मैं तोर मिटायो ॥
 सुन जुलहा मन भयो अनंदा । जिमि चकोर पायो निशि चंदा ॥
 छे सुत चलै इष मन कीन्हा । तासों पुनि अस बोलेहि लीन्हा ॥
 आगिल जन्म जब होइ तुम्हारा । तुम्है पठायब यम तैं न्यारा ॥

साखी-सुत काशी को लै चले, लोग देखन तहँ आव ॥

अन्न पानी भक्ष नहिं, जुलहा शोक जनाव ॥

चौपाई ।

तब जुलहा मन कीन्ह तिवाना । रामानंद सों कहि उत्पाना ॥
 मैं सुत पायो बड गुणवंता । कारण कौन भखै नहिं संता ॥
 रामानन्द ध्यान तब धारा । जुलहा सो तब बचन उचारा ॥
 पूर्व जन्म तैं ब्राह्मण जाती । हरि सेवा कीन्हेसि भलि भांती ॥
 कछु तुव सेवा हरि की चूका । तातैं भायो जुलहा को रूपा ॥
 प्रीति प्रभु गहि तोरी लीन्हा । तातैं उद्यान में सुत तोहि दीन्हा ॥

नूरी वचन ।

हे प्रभु जस कीन्ह्यो तस पायो । आरत हो तुव दर्शन आयो ॥
 सो कहिये उपाय गुसाई । बालक क्षुधावंत कछु खाई ॥
 रामानंद अस युक्ति बिचारा । तुम सुत कोइ ज्ञानी अवतारा ॥
 बछिया जाही बैल नहिं लागा । सो ले ठाढ़े करै तेहि आगा ॥

साखी-दूध चलै तेहि थन तैं, दूधहि धरौ छिपाइ ॥

क्षुधावंत जब होवै, ता कहँ देउ खवाइ ॥

चौपाई ।

जुलहा इक बछिया लै आवा । चल्यो दूत कोउ मर्म न पावा ॥
 चल्यो दूत जुलहा हरषाना । राख छिपाइ काहु नहिं जाना ॥
 सुन भामिनि आगे चल आवा । सो लै जाइ कोई भेद न पावा ॥

बाललीला ।

दूध न पीवत नाम कबीरा । खेलत संत संग मत धीरा ॥
तिनसों कहैं जागौरे भाई । बिना नाम नहिं काल पराई ॥
कोई न बुझै भेद हमारा । रामानंद पर तब पगु धारा ॥
तब अपने मन कीन्ह उपाई । तिनहिं दरश कैसहु नहिं पाई ॥

रामानन्दको गुरु करना ।

जाहिं रामानंद गंग स्नाना । तेहि मारग में जा पौढाना ॥
तबहिं पांव गुरु लग कबीरू । रामानंद बोल्यो मत धरू ॥
उठ कबीर तब बचन उचारा । रामानंद है गुरु हमारा ॥
साखी-करहि गोष्ठी शिष्य सब, कोई ज्ञान जीत नहिं जाय ॥

सप्त ऋषि सुधि पाई, गुरु सों बोले आय ॥

चौपाई ।

विद्या कहे मलेच्छ को दीन्हा । रामानंद क्रोध तब कीन्हा ॥
चले शिष्य तब आज्ञा पाई । कबीर संतको आन बुलाई ॥
सुनतहिं शिष्य चहुं दिशि धाये । हेर खोज कबीरै लाये ॥
आये कबीर लागि नहिं बारा । गुरु मंडलमें आन पगु धारा ॥
अन्तर कपाट शिष्य तब लाया । पूजत रामानंद हरि राया ॥
सुन कबीर आगे चलि आये । गुरुहि आनकर मस्तक नाये ॥
लक्ष्मीनारायण मुकट सिरनाये । पहिरै वस्त्र माल नहीं समाये ॥
तबहिं कबीर बचन अस भाखा । वस्त्र पहिरि माला तुम राखा ॥
अंतर कपाट खोल तब दीन्हा । रामानंद सुन अचरज कीन्हा ॥
दिव्य ज्ञान तुम कहैं केहि दीन्हा । जोर कर गुरुहि विनोदित कीन्हा ॥
कब हम तुम को दिक्षा दीन्हा । नाम हमारा काहे तुम लीन्हा ॥
गुरु हमैं तुम दिक्षा दीन्हा । झूठ बोलका क्या फल चीन्हा ॥

साखी-गुरु जब चलै नहाने, तब हम दिक्षा पाव ॥
तातै गुरु कहि थाप्यो, फिर पीछे पछताव ॥

चौपाई ।

पूज्यौ पाइन पंडित धर्मा । पहिल न जानो तुम्हरो मर्मा ॥
मैं तो चाहत मुक्ति पदारथ । तुम पाहिन पूजो निश्चारथ ॥
तब गुरु सुनकै अवरज भएऊ । योग समाधि वैकुण्ठहि गएऊ ॥
सत्त समाधि विष्णु जब देखा । तापर देश कबीरहि लेखा ॥
जहँ देखा तहाँ सत्त कबीरा । झूठ ध्यान भूले मत धीरा ॥
हे कबीर तुम मर्म न जाना । जान मलेछ क्रिया अपमाना ॥
जो कछु आहि मुक्ति सन्देशा । सो सब मोहि कहौ उपदेशा ॥

साहिब कबीर वचन ।

छोडौ सबै मान अभिमाना । तो कह देव मुक्ति फउ दाना ॥
शिष्य सखा सौं बात जनाऊ । काल तोर शरणागति आऊ ॥
कहै कबीर काल है काला । है बड दारुग काल कराळा ॥

साखी-मुक्तिदेव नहिं लेव तुम, रामानन्द गुरु देव ॥

भोरहि जन्म गर्वाय हो, करि पाहन की सेव ॥

सिकन्दरशाहकी बारता-चौपाई ।

ता निशि को तब भयो प्रभाता । काशी आइ भयी एक बाता ॥
आये सिकन्दर शाह सुल्ताना । है व्याधा बहु भेद न जाना ॥
रामानन्द की सुनी बडावा । तातै शाह आप चलि आवा ॥
आये मंडप जहां सुल्ताना । रामानन्द तब देख रिसाना ॥
आये शाह सन्मुख भये जबही । रामानंद मुख फेरा तबही ॥
वार अनेक तिहितें मुख फेरा । ताकी ओर क्रोध कर डेरा ॥
मारचो खड्ग परचो खसि धरनी । शाह के अंग अनिठ सम बानी ॥
आये शाह जहां दुःख नसावन । अधिक भई जो देह सतावन ॥

पय औ रुधिर चलयो गुरु अंगा । पावक उठी शाह के अंगा ॥
तबै शाह ने सुधि अस पाई । महिमा जान कबीर बुलाई ॥

साखी-कबीर दर्शन दीन्हा जबै, तपन भई सब दूर ॥

शाह कहा तुम सांच हो, औ अल्लहका नूर ॥

सिकन्दर वचन-चौपाई ।

पय औ रुधिर चलयो गुरु अंगा । शाह कहै यह कौन प्रसंगा ॥

कबीर वचन ।

जेहि तन मान्यो शब्द हमारा । तेहि तैं चले दूध की धारा ॥
कीन्हा कालउ केर विचारा । आधा अंग रुधिर अनुसारा ॥
अगले जन्म मुक्ति जो होई । अंकूरी जीव कहावै सोई ॥

गौको जिलाना ।

यहै चरित्र तहां पुनि भयऊ । तब नूरी के मंदिर गयऊ ॥
काजी मुल्ला सबै रहाये । गाय आनि के गलो कटाये ॥
देखि दुखित भये सत्त कबीरु । महा व्याधि गाई की पीरु ॥
केहि कारण गाई जो मारा । सो सब मोहि कहो उपचारा ॥
काजी काया देख बिचारी । एकहि ब्रह्म गाय क्यों मारी ॥
गाय जिवावहु मुर्गा सारु । नातर वेद अथर्वन हारु ॥
सत्त शब्द है जासु शरीरु । व्यापी महा गाय की पीरु ॥

साखी-छाँठके गाय ठाढी भई, आज्ञा जबही कीन्हा ॥

काजी मुल्ला जानि कै, पांव पकर तब लीन्हा ॥

चौपाई ।

नगर के लोग अचंभो लागा । यह कबीर कर्ता हो जागा ॥

मगह गवन ।

तब तहँ से पुनि कीन पयाना । उत्तर देश मगध अस्थाना ॥
नूवा नूरी काल बस भयऊ । तिन पुनि जन्म मनुष्यहि लयऊ ॥

राजा बीरसिंह देव बड राऊ । ताके गृह अब धरचो पाऊँ ॥
 कमलावती तासु नृप नारी । तिन बड सेवा कीन्ह हमारी ॥
 ताकौ दीन्ह पान परवाना । तिन कछु भेद हमारा जाना ॥
 कछो तासों मुक्ति प्रभाऊ । सुनत भयो आनंदित चाऊ ॥
 विजुलीखां पठान बड ज्ञानी । सन्त जान जिन सेवा ठानी ॥
 तासों कही मुक्ति परभाऊ । ज्ञान गम्य तिन बहुत कराऊ ॥

साखी-अति अधीन जब देखा, ता कहँ दीन्हा नाम ॥

प्रीति जानि कै ताकी, कछु दिन किय विश्राम ॥

चौपाई ।

विजुलीखां कहै पीर हमारे । नृप वीरसिंह शिष्य तुम्हारे ॥
 साहिब आप तजो जब देहा । दोइ दीन सो कीन्ह सनेहा ॥
 सुनि विहंसि अस आज्ञा ठानी । दोइ दीन से हम निरवानी ॥
 हिन्दू तुरक नहीं हो भाई । सुन पठान शंसय उपजाई ॥
 जो तुम दोइसों न्यारी रीती । मेरे मन कैसे होय प्रतीती ॥
 तुम तो हो अल्लह के बन्दा । यह तो अहै आदमी गंदा ॥
 तुमहि शरीर तजौगे जबही । शरीर उपाय करों क्या तबही ॥
 कै पृथिवी कै देहों जारा । करहु हुकम सो पीर हमारा ॥
 जा कछु होई लोक व्यवहारा । सोई कहो मम पीर पियारा ॥
 जो साहिब हुकम जस करिहौ । मजार तुम्हारा रचिके धरिहौ ॥
 साखी-बिहंसि कछो तब तिनसैं, मजार करौ सम्हार ॥

हिन्दू तुरक नहीं हौं, ऐसा बचन हमार ॥

चौपाई ।

दिन कछु गये तासु संवादा । राजा बीरसिंह ने भेजे प्यादा ॥
 बन्दीछोर आवैं मम गेहा । रानी ब्रिन्ती कीन्ह सनेहा ॥
 ताकी प्रीति तहां पगुधारा । दुःखद्वन्द तिन सबै बिसारा ॥

तिन पुनि कही सुनौ गुरु ज्ञानी । दुतिया व्याह लगन मैं ठानी ॥
 व्याह जो होय बिकट अस्थाना । क्या जानै होवै संग्रामा ॥
 कोइ घायल कोइ जाई मारा । खाडो आही दुहु दिश धारा ॥
 ताकी आज्ञा करौ गुसाई । तिनहि देह क्या करो उपाई ॥
 कै गाडौ कै जारौ धूरी । यह संशय मेटो प्रभु मोरी ॥
 करौ सोई लोक कुल धर्मा । बिन लागै कोइ जाने न मर्मा ॥
 साखी-जो गाढा तो माटी, जो जारौ तो छार ॥

करो लोक की जो कृति, बोलता ब्रह्म निनार ॥

चौपाई ।

हे स्वामी तुम मोहि बताओ । तुम तन तजो तो काहि कराओ ॥
 जस प्रभु तस पुन सेवक करई । सेवा युक्ति सदा सो तरई ॥
 जो तुम कितहु करहु प्याना । गाढहि लागै तुमहि पठाना ॥
 हँसै सबै यह देखि परतच्छा । गुरु तुम्हारो आहि मलेच्छा ॥
 तस कछु भेद बताओ स्वामी । करो कृपा सो अन्तर्यामी ॥
 बास्तव तेही कहौ बुझाई । जारौ देह जो क्षार उडाई ॥
 तातैं लोक में नहीं छुडाओ । यातैं दोई दीन फरमाओ ॥
 गयो नृपति तहँ साज बराती । कौतुक रचो देह तब त्यागी ॥
 सुनत साज दल चले पठाना । रानी मुर्दा ले बिल खाना ॥
 लेकर गाडै करै निमाजा । करन बिहानक दूरी काजा ॥

साखी-रानी भेजे प्यादहीं, तन जब तजो कबीर ॥

आयो बिजुली खान तब, सुनि वृत्तान्त गम्भीर ॥

चौपाई ।

राजा पास पठाओ पाती । सुनतहि क्रोध जरी तब छाती ॥
 छाड्यो व्याह चले दल साजी । इनैं निशान सम्हर की बाजी ॥
 बाजा गाजी तुरही आवहि । यह बिजुलीखां युक्ति बनावहि ॥
 ऐसी भांति सो कीन्ह पयाना । रन के आगे बजै निशाना ॥

बांधी अस्त्र अस चले बहु बीरा । कुहुक बान औ बहु धन तीरा ॥
 बरछी सेल औ छुरी कटारी । सङ्ग रु तुरी चपल परचारी ॥
 दोइ दिशि देख अस्त्र चमकारा । मानो साज चलो जल धारा ॥
 राजा कीन्ह मरन का ठाना । वयरस्त्र रोप जो रहो पठाना ॥
 जब देखा मैं होत लराई । युद्ध जानि अस कन्यो उपाई ॥
 रानी जान मोर कछु मर्मा । तिन पुनि कही तजो नृप भर्मा ॥
 साखी-पाहिले खोखो माटी, मुर्दा देखु निहार ॥

मुरदा नहिं वहि भीतरे, कदा करत हौ रार ॥

चौपाई ।

सत्त कबीर नहीं नर देही । जारै जरत ना गाडै गडही ॥
 पठघो दूत पुनि जहाँ पठाना । सुनिके खान अचंभौ माना ॥
 दोई दल आइ सलाहा जबही । बने गुरू नहिं भेटे तबही ॥
 दोनों देख तबै पछतावा । ऐसा गुरू चीन्ह नहिं पावा ॥
 अपने मनैं अचंभा ठाना । रंक माहिं धन गया छिपाना ॥
 दोऊ दीन कीन्ह बड शोगा । चक्रित भये सबै पुन लोगा ॥

रतनाकी कथा ।

तब अपने मन कीन्ह विचारा । रतना कँदोइन कै पगु धारा ॥
 रतना समाधान बहु कीन्हा । राजहि पटय सँदेशा दीन्हा ॥
 तुम नृप किमि करते पछताना । निश्चय आही शब्द प्रवाना ॥
 रहौ सदा शब्दहि मन लाई । दर्शन मोक्ष होय नहिं भाई ॥
 साखी-बिजुलीखाँ सौं दुआ कहि, किमि कारण पछताव ॥

रहौ नाम लौ लाइके, जाते कर्म कटाव ॥

चौपाई ।

लांक वेद म एसं बिचारा । किमि कारण मन दुखी तुम्हारा ॥
 सुनै दंडवत बहु विध कीन्हा । तत्व मता नामहि गहि लीन्हा ॥
 रतना सौं कहि मता अपाना । तेहि सुनिकै इरष बहु आना ॥

हे स्वामी मोहि कीजै चेरी । जातै कटै कर्म की बेरी ॥
 धन्य शब्द धनि जो कछु चाहिये । सो सब स्वामी मोसों कहिये ॥
 सवा सेर मिष्टान लै आवहु । और सवा सौ पान मँगावहु ॥
 इतना चाहिये और न काजा । तातै भाग चले यमराजा ॥
 सोई अंश पान निज लीन्हा । ताको जीव दान मैं दीन्हा ॥
 अंकूरी जिव भेटे निज गेहा । नूबा नाम जो प्रथम सनेहा ॥
 साखी—ताको पठ्यों निज भवन, तीन लोक तें न्यार ॥

नूरी के मन इच्छा, धर्मदास अवतार ॥

चौपाई ।

सुन धर्म दास यहै कुल धर्मा । मेटो तीरथ वरत कुल भर्मा ॥
 कोटि जन्म कीन्हों तप धर्मा । बिन सतगुरु नहिं मिटिहै भर्मा ॥

धर्मदास वचन ।

हंस राज जो दर्शन दीन्हा । जन्म स्वारथ अवमको कीन्हा ॥
 हे प्रभु मोरे बंदी छोरा । हों आधीन दास मैं तोरा ॥
 आनहुँ पान और मिठाई । जितनौ रतना के मन भाई ॥
 आनहु रतना कहाँ तुम स्वामी । कृपा करो तुम अन्तर्यामी ॥

कबीर वचन ।

प्रथम हि जो पावै निज बीरा । पुरुष रच्यो सुख सागर तीरा ॥
 जाके रहे पुरुष औ नारी । बीरा नाम जीव रखवारी ॥
 सवा लक्ष जीव नित्त जो मारा । तातैं सवा सेर व्यवहारा ॥

साखी—सवा सेर मिष्टान जो, और सवा सौ पान ॥

इतना लै जो शिष्य हो, यम तेहि देखि डरान ॥

चौपाई ।

मुहर देखि जैसे घट वारा । जिन्हें घाट ऊपर बैठारा ॥
 जो कोई झूठा रूप बनावै । बिना पान जान नहिं पावै ॥

आने फेर पर वाना सोई । जैसा अंक मुहर पर होई ॥
 इतनी सुन हरषे धर्म दासा । शिरनी पान लाइ धरे पासा ॥
 सेत सिंहा सन सेत ई साजा । सेत पान सिर छत्र बिराजा ॥
 पानै दलतैं सबही कीन्हा । तामें अंक अग्र को दीन्हा ॥
 प्रथम हि तिनका वेग तुरायी । मारग भेद तबै समुझायी ॥
 बाएं दाहिने है सहि दानी । इक दिश धर्म द्वितिय दुर्गदानी ॥
 पाछै चित्र गुपित्र को थाना । तेहि तजि हंसा देइ पयाना ॥
 टूटै घाट अठासी कोरी । हंसा चढे नाम की डोरी ॥

साखी—यमसों तिनका तारकै, तब दीजौ निजपान ॥

पाई प्रसादै हर्ष तब, शब्द देख मन मान ॥

चौपाई ।

जाइ उबारौ हंस अँकूरा । मन की दिशा देख मन भूला ॥
 हे प्रभु कौन शब्द है सारा । तौन शब्द तैं जीव उबारा ॥
 एक शब्द पुनि दीन्हा हेंरी । यही शब्द तैं जीव उबेरी ॥
 जस दरपर लै दीजे हाथा । दर्शन देखे मुख औ माथा ॥
 धर्म दास सुनत मन माना । बिकसे कभल उदै जनु भाना ॥
 यही बस्तु से जीव उबारा । और ज्ञान है बहुत अपारा ॥
 मूल नाम अक्षर धुनि साचा । जेहि तैं जीव काल सों बाचा ॥
 आदि नाम पुरुष कर आही । भाग जीव पाव पुनि ताही ॥
 धन्य भाग बस्तु जिन पाया । मोकहँसतगुरु अलख लखाया ॥
 अक्षर मूल और सब डाला । डारहि में फल फूल रसाला ॥
 किंचित को फल पावै सोई । कहैं कबीर अमर सो होई ॥
 अक्षर मूल अमी पँच शाखा । साखी रमैनी ताकी पाता ॥
 सुमिरन डार पदुप है जोगा । तेहि सम आहि ना दूसर भोगा ॥

साखी—अक्षर धुनि लौ लावई, अपराधै परिचय योग ॥

कहैं कबीर संशय गयी, भोगहि मध्ये भोग ॥

चौपाई ।

भव मैं अक्षर परचै पावै । सत्त गहै सतलोक सिधावै ॥
 पुहुपहि से फल उपजै सारा । फल है मुक्ति भोगसे न्यारा ॥
 हे प्रभु जो इतना नहिं जाना । सो जिव कैसे लोक पयाना ॥
 पंच अमी का सुमिरन दीजे । बंदी छोर ताहि किमि कीजे ॥
 ओ पुनि ताहि देव जप माछा । आवहि लोक सो भौनहि डाला ॥
 निश्चय कहौ पंथ कर भाऊ । दुविधा भाव लरो मत काऊ ॥
 कहो पंथ जो पाँजी वाक्का । धरती शीस स्वर्ग का नाका ॥

साखी—यहि विधि राह चलाइ, सुनहु हो धर्म दास ॥

जीव छुडा ओ काल सौ, सत्त शब्द परकाश ॥

धर्मदास वचन—चौपाई ।

हे प्रभु मैं कहत डराऊँ । कहों सो एक वस्तु जो पाऊँ ॥
 जो नहिं पावहि एती साजा । तासों किमि डरि है यमराजा ॥

कबीर वचन ।

साठ समय बारह चौपाई । एही तत्त्व हंस घर जाई ॥
 पांच अमी महुँ एकौ पावै । है परमान सो लोक सिधावै ॥
 अथवा जो एकौ नहिं पावै । चार करी तत्त्वन मन लावै ॥
 चार करी बूझै मन लाई । यमराजा तेहि देख डराई ॥
 अदेख देख तत्त्व मन धरयी । बोलता ब्रह्म सो परिचय करयी ॥
 इन की देख नाम लौ लावै । डोर गहै सत्य लोक सिधावै ॥

धर्मदास वचन ।

हे प्रभु जो इतना नहिं जानै । सो जीव कहा करै विश्रामै ॥
 नामहि पाइ तत्त्व मन धरई । दुविधा भाव कबहुँ नहिं करई ॥
 निर्गुण नाम रहे लव लाई । ताके निकट काल नहिं जायी ॥

साखी-खोज कर सत शब्द का, गहै तत्त्व मत धीर ॥

निश्चय लोक सिधाई है, अस कथ कहैं कबीर ॥

धर्मदास वचन-चौपाई ।

हे प्रभु जा पर दाया होई । पावै वस्तु सार पुनि सोई ॥

अथवा जो ऐती नहीं पावै । हे प्रभु तो कैसी बनि आवै ॥

साहिब कबीर वचन ।

पावै सार जान निज बीरा । निश दिन सुमिरै धन्य कबीरा ॥

जहाँ सुने सतगुरु को नामा । सुने भक्ति छाँडै सब कामा ॥

सुने जो भक्ति तत्त्व मन लावै । देह छोडि सत लोक सिधावै ॥

धर्मदास वचन ।

हे प्रभु जो इतना नहिं राता । तासौं कैसी कहिये बाता ॥

माया जीव अधिक लपटाना । तातैं प्रभु पूँछौ हठ ग्याना ॥

साहिब कबीर वचन ।

धर्मदास मोहि यहि भावै । करही जाप धनी जो पावै ॥

आवै मल्ल तब करें लडाई । जाने दाव घात चतुराई ॥

तबही बने कृषी को साजा । कोठी बीज खेत उप राजा ॥

साखी-शूरा बैर भल खोजिये, बीज धरहिको सार ॥

ल्याया बीज न बोइये, ऐसा मता हमार ॥

चौपाई ।

बिना नाम बहु तन डहकाया । फिर २ भौजल भटका खाया ॥

जुग २ जन्म बहुरि भव लीन्हा । होई हित नहिं नाम विहूना ॥

नाम पाय जो तत्त्व न धरई । ते पुनि जन्मै गुरु क्या करई ॥

तत्त्व प्रमाण यही धर्मदासा । तातैं मिटै कालकी फाँसा ॥

धर्मदास वचन ।

बालक कहा तत्त्व को जानैं । मुक्त होय तेहि कौन समानै ॥

साहेब कबीर वचन ।

बालक नाम कौ दीजै बीरा । पहुँचै लोक जब तजै शरीरा ॥
त्रिया कह सनेह है सारा । उपजै भाव होय जम न्यारा ॥
जातैं नर अचेत अज्ञाना । तातैं तत्त्व नाम परमाना ॥
तत्त्व है मूल और सब साखा । ताकौ नाम जोग मय भाखा ॥
जो नर तत्त्व ना राखे ज्ञाना । ताकौ ज्ञान बालक सम जाना ॥
पावै आदि अंत निज बीरा । पुरुष रच्यो सुख सागर तीरा ॥
छठै मास बीरा निज पावै । है प्रमान सो लोक सिधावै ॥

साखी-तत्त्व मुक्ति है निश्चय, औ बीरा निज सार ॥

माया लीन्ह नर प्राणी, भूल परा संसार ॥

धर्मदास वचन-चौपाई ।

निसिदिन रह माया लपटाना । सो प्रभु कैसे होय निर्वाना ॥

साहिब कबीर वचन ।

निस दिन रहे माया बिस्तारा । पलकौ भजै तो उतरै पारा ॥
पलकौ नाम चित्त ना धरई । ते पुनि जन्मैं गुर क्या करई ॥
कर्म निवारन जेहिते होई । परिचय सहज तत्त्व है सोई ॥

धर्मदास वचन ।

सो मोहि स्वामी प्रगट बताऊ । केहि विधि जोग कर्म समझाऊ ॥

साहेब कबीर वचन ।

प्रथम सत्य आसन आराधै । निवरी कर्म जो या विधि साधै ॥
काम मारिये अल्प अहारा । जहाँ काम तहि जोग बिकारा ॥
कोइ कछु कहै हृदय नहिं धरई । निंदा बिन्दा सब परिहरई ॥
तजै देह जिमि कांचरि सांपा । आलस निद्रा सहज निदापा ॥
दृष्टि न जावै भल और मंदा । मनहि न आनै संसो नंदा ॥
धोती वस्ती नेती करई । जिमि कामिनि सो ग्रहै बहरई ॥

तिनका खेद मंदिर में होई । करई दूर भामिनी सोई ॥
या विधि काया संयम राधै । बाधै मूल अरु नाको साधै ॥

छंद-मूल बाधै नाम साधै काया संयम जानिकै ॥

मन पवन दोई तुरी साजै युक्ति जीव बनायकै ॥

देइ ताडना चित्त कौ तुबक सर छाडै आस हो ॥

तेही आस चढ टोरै ममासा जीव होय निकास हो ॥

सोरठा-ऐसी बाजी होई, मन के संग दौराइये ॥

मन शूरा पुनि सो, कष्ट परै पुनि ना टरै ॥

चौपाई ।

परै कष्ट तब तोरिगे वासा । राखै खड्ग नाम को पासा ॥

नाम अस्त्र ते दूत डरायी । भागै अरि शूरा जिमि पायी ॥

अरि के भाजै होय हुलासा । दुविधा मिटै कमल परगासा ॥

अष्ट कमल देखै पुनि सोई । मानौ रंक महा धन होई ॥

देखै ब्रह्म जहाँ अस्थाना । भय भाजै तब हो निर्वाणा ॥

अष्ट कमल वर्णन ।

अष्ट कमल तोहि भेद बताऊँ । अजपा सोहं प्रकट बुझाऊँ ॥

मूल कमल दल चार ठिकाना । देव गणेश तहां कीन्ह पयाना ॥

ऋद्धि सिद्धि बासा तहँ होई । छै सौ जाप अजपा तहँ सोई ॥

द्वितीय कमल षटदल परमाना । तहँ कमलन कर आहि ठिकाना ॥

सावित्री ब्रह्मा है जहवां । षट सहस्र जाप है तहँवां ॥

छन्द-त्रय कमल दल अष्ट है हरि लक्ष्मी तिहि संग मौं ॥

षट सहस्र जहँ होई अजपा निराखि देखो अंग मौं ॥

कमल चौथा द्वादश दल शिव कौ तहां निवासु हो ॥

सुरति निरति करि लोक पहुँचै षट सहस्र जहां जासु हो ॥

सोरठा-पचयें कमल प्रकाश, तिहिं षोडस दल अहै ॥
आतम जीव निवास, कइ सहस्र अजपा कह्यो ॥

चौपाई ।

छठवां कमल अहै दल तीनी । सरस्वती तहँ वासा कीनी ॥
दोसौ एक अजपा जहँ होई । बूझ भेद सो बिरला कोई ॥
भौर गुफा दो दल परवाना । सातों कमल को आहि ठिकाना ॥
एक सहस्र अजपा परकाशा । तहां बोलता ब्रह्म को बासा ॥
तहां जोग साधे बहु जोगी । इंगला पिंगला सुख मनि भांगी ॥
तहां देख असंख्य जो फूला । ब्रह्म थाप काया में भूला ॥
सात कमल जाने सब कोई । अष्टम कमल बिनु मुक्ति न होई ॥
बिनु सतगुरु को भेद बतावै । नाम प्रताप जोग हि आवै ॥
काया तें जो बाहिर होई । भाग जीव पावै पुन सोई ॥
छंद ।

बहु भांति मुनि ऋषि जोग ठान्यो भयो रहित नहिं लैसहो ॥
काया थापी सुरति सों सब काग भये नहिं हंस हो ॥
पक्षी होई तब होइ महाबल नाम बिना तो काग हो ॥
पक्षी त्यागी जो नाम साधे हंस होय बड भाग हो ॥
सोरठा-जोग तो आहि अपार, पक्षी भया पर नयन नहीं ॥
जोग नाम उजियार, नाम तेहि जो पावही ॥

चौपाई ।

पक्षी भाग नयन जिन पावै । ताके जहां तहां उडजावै ॥
देखे लोक जो गुरु बतावै । पक्षी नयन को यहै स्वभावै ॥
अथवा नाम नेक जो पावै । साधे तत्त्व जो लोक सिधावै ॥
नाम नयन पक्षी जो होई । तेहि समान दूसर नहिं कोई ॥
बाहिर को मैं कहब ठिकाना । सुरति कमल सतगुरु निरवाना ॥

छः सो एक एकसो बीसा । अजपा ऊपर देखे ईसा ॥
सात दल कमल देव ऋषि माना । अष्ट कमल उनहूं नहिं जाना ॥

छंद—यह भांति अजपा तत्त्वऽराधे बस करे पांचों भूत हो ॥

रुनक झुनक बाजे आदि अक्षर दिमंकर बाचे तार हो ॥

षट् चक्र बांधे देह में तब जोग मुद्रा सार हो ॥

प्रेम को बाजै पखावज प्रति दिना ततकार हो ॥

सोरठा—आतम जीव जो जाय, मुक्ति मुक्ता संग में ॥

तिन सँग ब्रह्म समाय, जिमि जा सरिता सागरैं ॥

चौपाई ।

सरिता परै सिन्धु महँ जबही । दुबिधा भाव न उपजै कबही ॥

सरिता संग रहे यक नीरा । भिन्न भाव कथ कहैं कबीरा ॥

दक्षिण नयन जब नेह निहारी । ते समरै बहुतै अधिकारी ॥

चंदन निकट वृक्ष जो होई । भेद सुबास प्रबल है सोई ॥

संगति का फल ऐसा होई । यह तो भेद जाने जन कोई ॥

चन्दन नाम सुमेर है जोगा । इतनी प्रकट करै जो भोगा ॥

आतम जीव भेद पुनि होई । चन्दन बेल कहै सब कोई ॥

चन्दन कष्ट सब कोई जाना । यहै भेद बिरले पहिचाना ॥

छंद ।

जोग सम कछु भोग नार्ही देखु हृदय बिचारि कै ॥

पांच को बस करो आपने बसै पांच सम्हारि कै ॥

तीन गुण औ नाम चौथा बहुरि इनहिं सम्हारिये ॥

तब जीतिये निष्कंटका हो प्रति जोग यहि विधि साधिये ॥

सोरठा ।

मेटें जम को दंड, मुक्ति होय तेहि अटल पुन ॥

विष को करे निकंद, जोग होय जो नाम फल ॥

चौपाई ।

संशय मिटे जोग के धारे । मैं अपने मन कीन्ह बिचारे ॥
संशय को खंडन है जोगा । ता सम आहि न दूसर भोगा ॥
जीव को काज जाहितें होई । सोई जतन करो सब कोई ॥
अथवा देह जोग कोई न साधे । तो अब सहज जोग अवराधे ॥
ता में मिल जो यह निस रहई । दुबिधा भाव कबहुँ नहिं करई ॥

साखी-पांच तत्त्व गुण तीन हैं, और प्रकृति पचीस ॥

चौतीस ऊपर डेरा करई, नाम तत्त्व इक्कीस ॥

चौपाई ।

चौतीस ऊपर डेरा करई । नाम तत्त्व पलक नहिं टरई ॥
ये सब एक नखा मैं राखै । गुरु प्रसाद अमीरस चाखै ॥
सत गुरु दया सम्पुट उघराई । शून्य शहर में बैठे जाई ॥
देखे बोलता ब्रह्म तेहि ठाई । करे हर्ष धर्ष सी जाई ॥
ब्रह्म देखि त्रिकुटी मैं मुक्ता । जीव सीव होय इक जुगता ॥
जीव सीव एकै लख जाना । देह जीव तब देख पयाना ॥
शब्द प्रतीत देख सत लोका । गुरु की दया मिटे सब धोखा ॥
अगम अलख सो गुरु समझावै । सुरती निरति से दर्शन पावै ॥
गुरु की दया गम्य जो होई । निश्चय दर्शन पावै सोई ॥
एक बार जो दर्शन पावै । देखै बहुरि विलम्ब न लावै ॥
एकै सुरति निरति जो धारै । सुरति सनेही दीप निहारै ॥
यह निस तत्त्व मता जो धारै । गुरु प्रताप सों लोक सिधारै ॥
जाते सहज जोग नहिं होई । तातें आरति साधे छोई ॥
जो मनसा मारे नहिं कोई । तो पुन दासी कर निज सोई ॥
जो कोई काळे सन्त का भेखा । तासों कहिये जोग का लेखा ॥

साखी-गेही लीन्हें आरती, संत सोई सो भोग ॥

इडा खिगला साधिकै, सुषमनिऽराधे जोग ॥

चौपाई ।

जसे ग्रेही के मन नेहा । तैसे साधे जोग सनेहा ॥
 आसन दृढ पर नारि न जावै । ग्रेही रहै न भेष बनावै ॥
 देखी देखा भेष बनावै । राध जोग तो शोभा पावै ॥
 भेष धरै सूरता चाही । कादर भेष की हांसी आही ॥
 जाते मन सूरमा नहिं होई । तातें ग्रेही थाप्यो सोई ॥
 ग्रेही में छल मता अपारा । तातें सत्य भक्ति चित धारा ॥
 करे जो सेवा संत की सोई । आरत भक्त महा फल होई ॥
 धन्य संत जो आरति साजा । काल जंजाल तेहि घर तें भाजा ॥
 आरति समान भक्ति नहीं दूजा । सब ते भली संत की पूजा ॥
 चरणा मृत तासु को लई । सुरति निरति चरणन चित देई ॥

साखी—संत आरती जोग मन, करहि गगनमें बास ॥

ग्रेही जोग न जानहीं, कर आरति परकाश ॥

चौपाई ।

बिना जोग में होय उबारा । कै नेवर कै दीपक बारा ॥
 तातें सहज जोग में भाखा । शिरानि पान महात्म राखा ॥
 आरति तो नानाविधि साजै । पान मिष्टान्न भक्त भय भाजै ॥
 जो कछु आहि जोगकर भाऊ । सब भाखौ आरति परभाऊ ॥
 वह देही यह ग्रेही व्यवहारै । काया संजम दै अनुसारै ॥
 निशिदिन सुरति निरति बिचारा । तातें मंदिर सेत सम्हारा ॥
 पांचौं तत्त्व तीन गुण साधै । तातें मन बिच आरति राधै ॥
 इंगला पिंगला सुष्मनि वासा । मन बिच कर्म आरत प्रकाशा ॥
 बांधें मूल नाम को साधै । दुबिधा मिटै एक अवराधै ॥
 एक घरै कर प्रकृति पचीसा । सांई पुरुष आरति में दीसा ॥

साखी—उलट पवन जब आवै, त्रिकुटी भेंट जो होय ॥

गुरु की दाया प्रकट हो, संपुट उघरै सोय ॥

चौपाई ।

उधरै संपुट गुरु की दाया । नरिअर को देखै परभाया ॥
 तत्त मूल नरिअर मां जाना । ज्ञानवंत भजि हो निर्वाना ॥
 अनहद बाजै त्रिकुटी ताला । तातें भक्ति जो होय रिशाला ॥
 बिन करतार पखावज बाजै । अनहद धुन निसदिन तहँ गाजै ॥
 अष्ट दल कमल फूल जो फूला । तातें सुमिरन किय समतूला ॥
 सुन अति जोग छतीसौं रागा । तातें भांति भांति पद जागा ॥
 जोग करत में देह बिसारै । या संसार में काज सम्हारै ॥
 जोग समाधि छूटत नहिं देखा । आरत से मिटै कर्म विशेषा ॥
 प्रतिदिन जो समाधि मन लावै । तातें सदा आरति गावै ॥
 जोग हीन तत्त नहिं लहई । तातें पान पढोता चहई ॥
 देखो मन बहुरंग अपारा । तातें पुहुप से विस्तारा ॥
 देह समाधि गंध बहु होई । साथै अग्र प्रबल है सोई ॥
 चौका सेत हंस भल छाजै । सेत सिंहासन छत्र बिराजै ॥

साखी-परचै में मन बांधै, करे जोग मन बास ॥

संतन आरत जोग मन, दीपक करे प्रकाश ॥

चौपाई ।

मन औ पवन आहिं दो धारा । तातें पवन अनिल घृत जारा ॥
 जोग जुगत बिन संग न होई । पालै पवन पाहन है सोई ॥
 गगन बाव गरजै जो जाई । दीप शिखर द्वारै ठहरायी ॥
 ल्यावै जोग अमीरस चाखा । तातें महाप्रसाद जो भाषा ॥
 धन्य अंकूर जीव है सोई । परिचय जोग करै तन जोई ॥
 जोग न होय आरती करई । सोई जीव भवसागर तरई ॥
 मूल नाम और सब शाखा । पुहुप जोग महातम राखा ॥
 जोगी दृष्टि भाव बहु करई । घट २ में सुमिरन अनुसरई ॥

सूल नाम मुक्ति फल जोगा । ताते नरिअर मिष्टानका भोगा ॥
 देह बिसार जोग फल चाखा । मन बच कर्म नरिअर सत भाखा ॥
 उज्ज्वल मंदिर सेत सम्हारा । तेहि रूप साज्यो पनवारा ॥
 मुक्ति पदारथ अवेधा हीरा । तेहि पाये कोई गहिर गंभीरा ॥
 चंदन काष्ठ सिंहासन चाही । सुमिरण नाम इकोतर आही ॥

साखी—उत्तम पान बडो ना, टूटा भंग न होय ॥

नरिअर चाहिये निर्मल, महां मुक्ति फल होय ॥

चौपाई ।

और कछु बात संपत्ति आही । काचा जीव सुन बिचले ताही ॥
 ताते सहज बतायो भाऊ । प्रचै जीव को परम स्वभाऊ ॥
 अथवा जो इतना नहिं होई । सहज आरती थापो सोई ॥
 सवा सेर आनो मिष्टाना । तत्त सवासौ आनो पाना ॥
 प्रति पूनों जो आरति करई । सोई जीव भवसागर तरई ॥

धर्मदास वचन ।

हे प्रभु पूनों कह अधिकारा । दया करौ दुख भंजन हारा ॥

साहिब कबीर वचन ।

तुम कह दीन्ह यही दिन पाना । तासौं पूनों आरति ठाना ॥
 अथवा सबई अर्थ नहिं जाना । दोई आरति थाप प्रमाना ॥
 छठे मास साजौ निज बीरा । तातें दोई आरती मत धीरा ॥

साखी—जोग आरती फल बडा, सत्त बचन परकाश ॥

दुबिधा मेटो निश्चय, सत्तलोक होय बास ॥

चौपाई ।

सत्तभाव देखहु मति धीरा । लगन साधि देऊ निज बीरा ॥
 बिना लगन करो मत शिक्षा । जोती खेती जो भल दिक्षा ॥
 ऊसर बीज डारही कोई । निःफल खेती किसान की होई ॥

ऊसर बीज का ऐसा भाऊ । बोवहि बीज अवृथा जाऊ ॥
 काचे जीव कहैं सुमिरन देई । परिचय जीव तात गहि लेई ॥
 ता कहैं कैसी करहि जमराजा । देह धरै तो गुरु कहैं लाजा ॥
 बिना लगन मगन भयो जानी । ऐसो अहै शिष्य सहिदानी ॥
 पूरा जब शिष्य जो होई । गुरु देव भेद बतावै सोई ॥
 अथवा जो गुरु अंतर राखौ । गुरु में धोख संत में भाखौ ॥
 लीक करी औ पंथ बतावै । शोभा अधिक गुरु सों पावै ॥
 जस बाना तस होवै करनी । ता गुरु सम औरन बरनी ॥
 सदा लीन नाम जो भाखै । पांच आत्मा अनुसूचि राखै ॥
 पांचमें करे पच्चीसों नारी । ते बस किये जोग अधिकारी ॥
 मरत तजो जस कांचरी सांपा । तातें सब को मेटब दापा ॥
 करो शिष्य जो यहि विधि कोई । पुरइनि पान रहैं जनु सोई ॥

साखी-जो ऐसी बनि आवै, और बान है सार ॥

तातें ग्रेही थापो, कडिहारी संसार ॥

चौपाई-गुरुवाके लक्षण ।

आप स्वारथी भेष बनावै । मन की दशा ताहि चित लावै ॥
 तृष्णा जुक्त करे गुरुवाई । जम सों बाचै कौन उपाई ॥
 निश्चय मानो शब्द हमारा । पर द्रोही कैसा कडिहारा ॥
 आप अबूझ औरन समझावै । साखी रमैनी झगरो लावे ॥
 जातें साधु सेवा नहिं आवै । तृष्णा कारण भेष बनावै ॥
 सिंह न चाहै स्वान सियारा । पैरच बिना कैसे कडिहारा ॥
 पर नारी औ मन्मथ कर्मा । यह तो भेद काल को मर्मा ॥
 मारहि मनसा होइ सो होई । नातर नारि करे पुनि लोई ॥
 ग्रेही माहिं भक्ति को भेवा । नाम जपै औ साधु सेवा ॥
 जोपै सहज भाव कडिहारा । शिष्य किये का क्या अधिकारा ॥

ग्रेही माहिं मुक्त फल बासा । सो सब बचन कहौ परकाशा ॥
नाम गहै राखै सत करमा । सब जीव तजै एक पुनि भरमा ॥

साखी-मद रु मांस को त्यागै, औ न करै जीव घात ॥

अथवा जो कछु चूकि है, साधु सेव चित राख ॥

चौपाई ।

कर आरती मन बिच करमा । पर घर तजै जान निज भरमा ॥
गृह में जो रहे उदासा । निश्चय सत लोक में वासा ॥
जो कोइ यहै अवज्ञा करई । कछु दिन रूपहीन अनुसरई ॥
जो को चूके साधु की सेवा । ताकर फल भाखों कछु भेवा ॥
जाइ सो लोक नाम परतापा । तजै देह जिमि कांचरि सांपा ॥
देखै जाइ हंसन की पांती । ता मध्ये अस बैठ अजाती ॥
जातैं चूक परैं सिवकाई । तातैं शोभा हीन लजाई ॥
जो कोइ याकी करे उछेदा । तातैं मैं समझाऊं भेदा ॥
गृही तरै सो कौन विशेषा । गुरु को अचरज यौ बड देखा ॥
गुरु नहीं कोइ यहि भवसागर । सतगुरु आप अजर मनि आगर ॥
जाप आहि जो नाम हमारा । तातैं नाम धरा कडिहारा ॥
कडिहार लेवै जीवका भारा । तेहि न सूझ किमि उतरै पारा ॥

साखी-जैसे महिमा प्रकट है, तैसे सिन्धु का नीर ॥

सरिता सब कडिहार भये, सतगुरु सिन्धु कबीर ॥

चौपाई ।

सरिता माहिं बारि जो होई । जीव जन्तु सुख पावै सोई ॥
सरिता लहै पुण्य परमारथ । सत कडिहारी जोग स्वारथ ॥
अथवा नीर अथाह न होई । सहज जोग भाखौ पुनि सोई ॥
नदी में सोह सदा जां बारी । ऐसी उत्पति आहि हमारी ॥
प्यासा जाय नदी के पासा । बिन पानी सो जाय पियासा ॥

प्यासा पानी नदी न पावै । जहँ पानी तहँ तृषा बुझावै ॥
 इक जीव ग्रेही आप उबारा । बार नदी नहिं सत कडिहारा ॥
 बांधे अस्त्र करे शूरमाई । तिन के त्रास सौं दुर्जन डराई ॥
 काछे रहै शूर का साजा । आयो समय कादर हो भाजा ॥
 यहि विश्वास रहै जो कोइ । स्वारथ पिंड परै जन सोई ॥
 परै पिंड तब हांवै हांसी । दै विश्वास जीव जो फांसी ॥
 चतुरा पाहिले करै उपाई । द्रव्य न मिले अनते नहिं जाई ॥
 धन मिले का यही उपाई । ग्रेही भाव रचो जो भाई ॥
 क्षुधावंत जाके गृह आवै । भले बुरेके असन न जावै ॥
 क्षुधावंत जो करही ग्रासा । सन्तुष्ट होय तुर तेही पासा ॥
 औ जहां देखै सत्त का वाना । ता कहँ बहुत करे सन्माना ॥
 करै साधु सेवा मनराता । ता कहँ मै बणौं विख्याता ॥
 जस जासूस द्रव्य नहिं पावै । ताके नग्र सैंध दै आवै ॥
 चतुरा करै तासु सन्माना । जो पुन ताको करे बखाना ॥
 ताके पुर का मता बतावै । विवेककी महिमा दरसावै ॥
 ताके गेह दरब न चलै जबही । ताकी महिमा दूत करे तबही ॥
 बहुविधि महिमा करे जमदूता । तासों कोई न करे अजगूता ॥
 भाजै कादर नगर बधाई । ताके निकट जान नहिं पाई ॥
 धन्य सोई जो गेही करई । भल मंदा को उदर भरई ॥
 ता कहँ होई पुन्य परमारथ । नाम गहँ जन्म होय स्वारथ ॥
 कडिहार सोई जो शूरा होई । भाखों ताहि आप सम सोई ॥

साखी—कडिहारी औ गृही को, कोई ना जाने अंत ॥

बिन परचै विसमाद है, हरषत परचै संत ॥

चौपाई ।

भाषो संयम सत के भाऊ । अस गेही जो करै उपाऊ ॥
 प्रात नेम जो करै अस्नाना । प्रथम प्रकुलित कमल बिगसाना ॥

मद रु मांस कहँ त्यागै दोऊ । मिथ्या जीव घात पुनि सोऊ ॥
 सत आसन पर निद्रा त्यागी । भली बुरी सैं रहत बिरागी ॥
 जाइ जहाँ बर जहँ हितकारी । उचट न परई अन्तर भारी ॥
 क्षुधावन्त हित कारी होई । अति प्रिय जान समोवहि सोई ॥
 यहि सम दूसर व्रत नहिं जाना । ते जन पूनौ आरत ठाना ॥
 कहौ जान दासा तन जोई । भागी जीव पावहि निज सोई ॥
 शिष्य होय जो तन मन वारै । गुरु आज्ञा कबहुं नहिं टारै ॥
 गुरु दै शब्द मुक्ति जेहि होई । तेहि समान दूसर नहिं कोई ॥

साखी--तन मन गुरु को दीजिये, मुक्ति पदारथ जान ॥

गुरु की सेवा मुक्ति फल, यह गेही सहिदान ॥

गुरु लक्षण-चौपाई ।

गुरु सोई जो सब ते न्यारा । सो सब मैं भाखौ उपचारा ॥
 जल तैं पुरइन का है मूला । पानी पत्र न लागै फूला ॥
 जातैं देह धरा कडिहारा । तातैं चहिये सब उपचारा ॥
 जैसे मूल पुरइन को पानी । ऐसहि दुनियां की सहिदानी ॥
 काया धरै सब न कडिहारा । पुरइन भेद तैं उतरे पारा ॥
 केतो शिष्य करे सनमाना । ते पानी पुरइन सम जाना ॥
 इतना सुनै रहै लपटाई । तो वह जग समान है भाई ॥
 पुरइन मुक्ति लोक में बासा । गुरु बिन परहि काल की फांसा ॥
 काल बस जीव नहिं तरई । तेहि विश्वास जन्म सोइ धरई ॥
 कहा संत सबहि में भेदा । आप स्वारथी करहि उच्छेदा ॥

साखी-नहीं सहज सत गुरु बचन, करम कुटिलता ठान ॥

चलै लोक गति नरकहुं, सरिता सिन्धु समान ॥

चौपाई ।

लोक गर्व गति राखै भाऊ । ताको देख मास पुन खाऊ ॥
 बहुत यत्न मैं भाव बताया । जो नहिं बूझ अंत पछिताया ॥

धर्मदास वचन ।

हे स्वामी तुम सुनो सत भाऊ । जो पूछों सो मोहि बताऊ ॥
जब तन तजे बोलता ब्रह्मा । किहि बिधि जाइ कहाँ सो मर्मा ॥
सो मोहि स्वामी भेद बताऊ । धर्मदास टेके गहि पाऊ ॥

साहिब कबीर वचन ।

आवै अंत होय नर जबही । अंतक आनै पठवै तबही ॥
जो जीव नाम तत्त्व मन लावै । ताको अंतक दूत नहिं पावै ॥
नौ द्वारा लग छेकै जाई । दशगंधार अब देउ बताई ॥
दसों द्वारन केते न्यारा । भौर गुफा में सो है तारा ॥
गुरु प्रताप पंथ तेहि जायी । आदि पवन तेहि होत सहायी ॥
अरध उरध में पवन का वासा । मूल पवन प्रथम जो भाषा ॥
तेहि पर हंस होय असवारा । पचासी पवन का जो सिरदारा ॥
तिहि चढ हंसा घरको जाई । मान सरोवर जा ठहराई ॥
अंतक दूत करै पछताई । सो सब भेद कहाँ समझाई ॥
भक्षै यहि कारण यम राया । तबहि जीव ताहि समझाया ॥

साखी—काल फांस जेहि बांधै, जो नहिं राखै नाम ॥

तत्त्व हीन जीव व्याकुल, अंतक राखै ग्राम ॥

चौपाई ।

जो कछु पहिले भेद बताया । सो नहिं करै हतै यमराया ॥
छठै मास बीरा निज होई । सो नहिं होइ करो क्या कोई ॥
किंचित् तत्त्व भाव विधि धारै । गुरु प्रताप ते लोक सिधारै ॥
लाके निकट अंतक जो जाई । होय बलहीन चक्षु ही नाई ॥
तहंवां आहि पंथ का फेरा । एक हमारे इक यमकेरा ॥
गुरु जो प्रथमहिं भेद बतावै । निज घर बैठ हंस सो आवै ॥
आवै शीस ऊपर दै पाऊ । जाय तहां सो कहाँ प्रभाऊ ॥
यहि बिधि द्वारै यम कौ दूता । पाँजी रोक धर्म अवधूता ॥
प्रथमहि मान सरोवर जाई । जइवाँ कामिनि राज बनाई ॥

शोभा हीन हिरंमर वारा । तातें अटकैं हंस पियारा ॥
हंस द्वीप में पहुंचै जाई । शोभा हीन सो बहुत लजाई ॥

साखी—ते पुनि करै अधीनता, हंस सुजन जन पास ॥

कहा अपराध गुसाई, रूप न होय प्रकाश ॥

चौपाई ।

जब लग मूल दरश नहिं पावै । शोभा तब लग नाहीं आवै ॥
जब लग शोक भगै नहिं भाई । शोभा तब लग नाहीं आई ॥
एक हंस नहिं शोक भराई । जो नहिं जीव इकोतर जाई ॥
पावै सार जान निज बीरा । पछकहि शोक मरै पुन धीरा ॥
प्रथमहि हेत द्वीप पर जाई । शोभा अधिक तहां पुन पाई ॥
शोभा तस षोडश जस भाना । रवितैं क्षीन हो सलिल समाना ॥
यहवां सूरज क्रांति प्रकाशा । वहवां जोती स्थिर निवासा ॥
ग्रासै सूरज शशि निरपाई । वहां न सतावै काल अन्याई ॥
जस कमोदिनि सम्पुट प्रभाऊ । तैसा वहां में युक्ति बनाऊ ॥

साखी—जस रविके परभावते, कमोदिनि सम्पुट लाग ॥

ऐसो रवि है निर्मल, पावत तनही जाग ॥

चौपाई ।

रवि के उदय जस मिले चकैवा । हंसा हंस मिठै जस भेवा ॥
रैन तजै तब देही त्यागा । पहुंचै लोक हंस मिल जागा ॥
मिल जस चकई चकवा करही । हंसा हंस भाव तस धरही ॥
रवि के उदय कमल जस फूला । हंस कमल सूरज रवि तूला ॥
रवि के उदय तिमिर जस भागा । हर्षहि धर्म हंस मन जागा ॥
सरल गरल तें अन्तर जानी । धर्मराय अपने मन आनी ॥
काया शोभा उडुगन बांती । अस बूझै चिकुरन की क्रांती ॥
सो पुनि चिकुर आहिं उजियारा । अस शोभा है हंस पियारा ॥
रजनी मुदित दिवस जो भएऊ । ज्योति अटल तस हंसा गएऊ ॥

साखी-नयन दोई भल छाजै, मानौ शशि की ज्योति ॥

शशि स्वभाव सो देखिये, ऐसी शोभा हांति ॥

चौपाई ।

वरण तासु चक्षु शोभाई । फूटी चंद दो दिशा समाई ॥

नयन दामिनी हांत झलहाला । पाछे नहिं अनिल उजियाला ॥

बादल घन विजुली चमकाई । शोभा मानों तेज लजाई ॥

श्रवण सांहे मनौ रवि के चाका । शोभा अधिक सु जाऊ थाका ॥

शोभा कंठ जैसे गिरि देवा । नाक कीन्ह सिष्ट जनु देवा ॥

शोभित कहे मिरनाल सरोजा । मुख जो कमल मिरनाल कुरोजा ॥

हे मिरनाल जनु सेतहि भाऊ । बदन प्रकाश शोभा बहु पाऊ ॥

विगसत कमल उदित जिमि तरुनी । हंस पदम दीपक जस वरणी ॥

काया तासु कदली नेहा । रोम रोम मुक्ता को रेहा ॥

धर्मदास वचन ।

हे स्वामी मैं पूछों भाऊ । जो पूछों सो मोहि बताऊ ॥

अन बेधा जस देखियत हीरा । रामत होवे हंस शरीरा ॥

साहिब कबीर वचन ।

साखी-जैघ पिंडुरी पग अँगुष्ठा, शोभा अधिक अपार ॥

शब्द रूप कारीगर, रवि शशि अनि जन ढार ॥

चौपाई ।

नख शोभा किमि करौ बखाना । जातैं हंसन कौ उतपाना ॥

नख न होय जैसे नख हीरा । अंगुरी बाद बरन चंद चीरा ॥

इयली सोहे मनु पूरण चंदा । अंगुरिन पांति शोभा अरबिन्दा ॥

जस क्रांती शोभा बहु भांती । छाजै तहाँ नखन की पांती ॥

एही सबै है रूप पर भाऊ । सब उजियार पुरुष से आऊ ॥

सो सब शोभा भाव बताऊ । अगम उपेक्षा सबहि बताऊ ॥

जातैं भयो मानो अधिकारा । तातैं कहौ रूप व्यवहारा ॥

जस अकाश महुँ उगहि सूर । हो उजियारा सो तिनहु पूरा ॥

पाइर द्वीप होई बड चोखा । परमारथ सो करत बड तोषा ॥
 राविगण पुरुष लगन जो लोका । उडगये हंस मिटा सब धोखा ॥
 दीप सार औ करी सम्हारी । तेज वरना चंदा अधिकारी ॥
 साखी-तीनों पुर उजियार भयो, उगे भानु अकाश ॥

तैसे पुर की ज्योति में, हंस जो करै प्रकाशक ॥

चौपाई ।

एक सूर्य का किंचित भाऊ । जाग उपेक्षा भाव बताऊ ॥
 हंस सुजन हंस के राजा । पल २ हंस दंडवत छाजा ॥
 एतिक हेत द्वीप उजियारा । बैठे सब जहँ हंस पियारा ॥
 ते पुन हंस दंडवत करही । क्षण २ माथ चरन तर धरही ॥
 धर्मदास वचन ।

हे प्रभु हेत द्वीप सुख पाया । अग्र द्वीप ताहि करी दाया ॥

साहिब कबीर वचन ।

हंस सुसज्जन दंडवत करहीं । पुरुष सौं फिर बिनती अनुसरहीं ॥
 जोग संतायन हंस लै आवहु । हेत द्वीप तिन को बैठावहु ॥
 देखा चाहे चरण जो द्वीपा । मंजुल मंगल करी समीपा ॥
 आज्ञा पाय चले हैं हंसा । चरणा द्वीप पहुँचे निःशंसा ॥
 अभय पक्ष हंस तहँ आवहिं । जोग संतायन भाव बतावहिं ॥
 जिहितें आहि आदि परवाना । पावै हंस तब करहिं पयाना ॥
 हंस राज तब मौन होय जाई । आवै हंस बहुत तेहि ठाई ॥

साखी-सहस्र अठासी पालंग, और सहस्र से तीन ॥

इतने हंस तब आवैं, यह अस्थिर कहँ चीन्ह ॥

पहिले बंदौ गुरु चरण, सुरति संतायनयोग ॥

बंदौ हंस सुजन जन, तिन प्रसाद यह भोग ॥

चौपाई ।

धन्य पुरुष जिन परिमल छाया । हंसन सुख बहुतै मन भाया ॥
 तब हंसा बहुते हर्षाना । प्रथम हंस सुजन जन ज्ञाना ॥

सुरति सनेही गुरु की दाया । हंस सुख बहुते मन भाया ॥
 पुहुप द्वीप ताको बिस्तारा । चार करी केता उजियारा ॥
 प्रथमहि महिमा जोत विस्तारा । बैठे जिन कहँ जोत अपारा ॥
 नौसे संख औ तेरा करोरी । एतिक महिमा द्वीपहि केरी ॥
 ता भीतर करी कस देखा । महिमा फल जस रवि को रेखा ॥
 अस जनि जानो रवि को भाऊ । उत्पक्षा सब भाव बताऊ ॥
 अंबू करी बहुते उजियारा । धन्य पुरुष जिन शब्द उचारा ॥
 साखी—इतना भाव सुख उपजै, अंबुकरी महुँ जाय ॥
 नाम तत्त्व जो राधे, सो अस्थिर बैठे आय ॥

चौपाई ।

शुभ करी किम करौ प्रवाना । जातें कूर्म काल उत्पाना ॥
 पक्षि पालना द्वीप बत्तीसा । तापर रूप सूर्य पच्चीसा ॥
 इक दिन मनो सूर्य की पांती । दुबिधा भाव न रूप की क्रांती ॥
 बरणों सूरज ज्योति अपारा । सोहै अटल रूप उजियारा ॥
 औ सब शुभ करी को भाऊ । सब उजियार पुरुष से आऊ ॥
 सिन्धू मध्य मेघ जस भरई । पुरुष शब्द ज्योति अनुसरई ॥
 जस जीव रहै विषय की आशा । शब्द पुरुष सत करे निवासा ॥
 प्रथम करी का मर्म न जाना । सो पुनि कैसे जाइ ठिकाना ॥
 दूसर द्वीप मम महा सुरंगा । परम हंस बैठे तिन संग ॥
 तीसर द्वीप जोगा जहां रहई । ताहि द्वीप का मरम ना लहई ॥
 आदि द्वीप पुरुष अस्थाना । तहां हिरंमर सुख कर थाना ॥

साक्षी—पक्ष पालना द्वीप बड, जामें ज्योति सुरंग ॥

नाम तत्त्व जो राधे, तो मेंटे दुख द्वन्द ॥

चौपाई ।

मूल द्वीप मूल नाम उचारा । तातें अग्र बीरा निज सारा ॥
 मूल अग्र बीरा निज पावै । इकोतर सो जीव लोक सिधावै ॥
 शोक भरे काया नहिं छाजा । शोभा हीन हंस होय लाजा ॥

ते पुन बहुत करे पछितावा । सुजन हंस सौं बिलिती लावा ॥
 हंस सुजन जन कहैं अस बानी । शब्द हमार सुनो हो ज्ञानी ॥
 जातैं जीव काल बस रहई । पुरुष शब्द जो नाहीं गहई ॥
 एक निमिष हंसा कर हाई । पुरुष सेज तेहि होवै सोई ॥
 सोई हंसा तन मन धरई । परम पुरुष सौं परिचय करई ॥
 परम द्वीप शोभा बहु होई । सब बिस्तार कहौं अब सोई ॥
 तहां बिराजै जस पुन कमला । उडुगन सूर सनेह जुनु जवला ॥

साखी-रत्न पदारथ थाका, पदम अनूप सुरंग ॥

उदित अवास बहुरि जितै, बिगसत सूर औ चंद ॥

चौपाई ।

जग मग ज्योति हंस सिर सोहै । ललित मौन रतनन जुनु मोहै ॥
 हंस के सीस छत्र जो धारा । पुरुष बानी तें होय उजियारा ॥
 मिटै तिमिर उदय जुनु भाना । हिरंमर भांति सब रूप प्रवाना ॥
 सबै रूप जस भये चकेवा । हंसा हंस मिलै तस भेवा ॥
 प्रथम हंस बैठे तह रहई । सो पुनि भक्ति परम पद करई ॥
 बहु दिन रहै नर्क की खानी । धन्य गुरू हंसा कियो पयानी ॥
 बैठे हंस सबै इक पांती । मेटो दुख जब भये अजाती ॥
 संशय सबै पिछली गएऊ । रंक महानिधि मानौ लहेऊ ॥
 पुहुप द्वीप महँ बैठे जाई । अमृत फलै जहां मिल पाई ॥
 मंगल करी देख जब जाई । देखत शोभा बहुत लुभाई ॥
 मेघ महल सो है ब्रह्मंडा । तहँ तस सँग रहै अरबिन्दा ॥
 जहँ लग मेघ बुन्द ढरकाई । तैसे कमल तहां बिगसाई ॥

साखी-पुरुष आप जस स्वाती, भरै मेघ शब्द झनकार ॥

जल सब भरो जो पोखरी, सोभा भूमि निनार ॥

चौपाई ।

बुन्द निरं कार बर षावै । शून्य शिखर तब शोभा पावै ॥
 करी स्वाति तहँ अमृत आही । प्रथम हंस देखै पुनि ताही ॥

तिन पुनि ध्यान पुरुषसौंधारा । बिगस्यो पुहुप बाणी उच्चार ॥
 फल अमृत तब टूटे चारी । तेहिंते फल अनेक विस्तारी ॥
 जेते हंस दर्शन को आये । एक एक सब हंसन पाये ॥
 आज्ञा मांगि हंस सब पाया । तबते भई अमर की काया ॥
 आस प्यास सब हंस अवाना । निर्वृति सुधा सो क्षुधा बुझाना ॥
 निवृत्ति करी किम करव बखाना । उदित भये जनु अगनित भाना ॥
 पालंग कोटि तीन कौ फेरा । निवृत्ति करी इतनौ बिस्तेरा ॥

साखी-हंस आवै बहु व्याकुल, बहुत करै पछिताव ॥

दयावंत प्रभु महिमा, मृतक दरस दिखराव ॥

चौपाई ।

प्रगट रूप देख्या 'पुन कैसा । जल बिलग गगन तासु रविजैसा ॥
 हंस सबै तब दर्शन पावा । भया हरष मिटा पछि तावा ॥
 हंस सबै तब भये अधीना । उडुगन माही शशिकौ चीन्हा ॥
 असजिन जानेव शशि का भाऊ । उत पक्षा सबई भाव बताऊ ॥
 चातक निस दिन बारि निहारै । पावै जल तब तृषा बिसारै ॥
 पुरुष दर्श स्वाती कौ पानी । देखि रूप सो तृषा बुझानी ॥
 पदमै संपुट लागा जबहीं । हंसा परम रूप भयो तबहीं ॥
 निज अस्थाने हंस न तब जाहीं । हंस द्वीप तहवां ठहराहीं ॥
 एकहि जात रूप सब माहा । दुविधा भाव सा देखत नाहा ॥
 ता भीतर पुहुपन की सेजा । पंकज बीज आहि जनु लेजा ॥
 अभै दीप ज्ञानी कौ वासा । तहवां हंस करहिं सुख रासा ॥
 पालंग तीन सौहै पुन द्वीपा । तहाँ पुरुष रहै अथर समीपा ॥
 पुहुप द्वीप बिगसो पुनि गुंजा । गुंज मनौ शशि भानु अलुंजा ॥
 भये पग स्थिर हंस सुखारी । पुहुप द्वी सिरजै छत्रधारी ॥
 हंसा तब पग अस्थिर आये । अमर चीर शोभा बहु पाये ॥
 मान सरोवर बहु नौनाई । शोभा रूप राशि बहु ताई ॥

सुरति सागर डोर समोई । मुक्ती द्वार तहाँ सौं गोई ॥
 सो द्वारा जो गुरु बतावै । मान सरोवर तैं चलि आवै ॥
 तहाँ हंस शील का थाना । माणिक मध्य दीप निर्वाना ॥
 चौरासी लक्ष द्वीप को फेरा । आवे हंस तहँ कीन्हो डेरा ॥
 तहाँ है पुनि कामिनि राजा । जग मग ज्योति तहाँ पुनि छाजा ॥
 बरणो शीश रूप भल आही । चार भानु जानौं तिहि पाही ॥

छंद-शीस झलक बहु बरणा पांती रूप शोभा राशि हो ॥

नौ लाख उडुगन पोह राखै भान शशिको भासि हो ॥

जग मगा चीकुर अतिहि सोहै राजै जैसे पुर सही ॥

अटल जेहि रूप बरनौ शशि बरणा काया कही ॥

सोरठा-शशि औ भानु निचोर, शोभा राखी शीश पर ॥

सेत बरणा अंजोर, मान सरोवर कामिनी ॥

चौपाई ।

भले नेत्र दरसन कस देखा । मानहु अर्काहि सुठार विशेषा ॥
 शब्द कारीगर रूप चम कारा । शशि अनेक ताही जनु ढारा ॥
 श्रवण गातु शोभा अधिकाई । जैसे छीर कै काढ मलाई ॥
 छीर भरो जनु शशि औ भाना । माखन रूप कामिनी ठाना ॥
 मौज अनेक ताके तन चीरा । लागे रवि शशि अगनित हीरा ॥
 चमके रूप ज्योति बहु भाऊ । सब उजियार पुरुषसे आऊ ॥

साखी-शोभा बहुते कामिनी, नख शिख सुन्दर रूप ॥

बैठे मानो भाव धरि, चन्द्रभानु बहु यूष ॥

चौपाई ।

सार शब्द पावै जो ताई । ताके बल हंसा घर जाई ॥
 इतना रूप कामिनी अंगा । नहि उपजै तहँ भाव अनंगा ॥
 बैठे रहई हंस सुख पावई । दृष्टि भाव परम मन भावई ॥
 ऐसी भक्ति नहि महि माहीं । पटतर बनै देत नहि ताहीं ॥
 जस पाहन मंजुमें ढारा । देखौ शोभा अगम अपारा ॥

महल पंच भूत तहँ नाहीं । हंसा बैठे सुख करै ताहीं ॥
 अग्र रुचिर छत्र सिर छाजा । हंसा लहत बहुत सुख साजा ॥
 जाय दिव्य तहँ करहिं निवासा । विमल अंग शोभा बहु पासा ॥
 मिटै भ्रम तब परिचय पाई । जहां रहै तहँवां ठकु राई ॥
 साखी-करहीं हंस सुख अस्थिर, अम्बू करी अस्थान ॥
 देखौ द्वीप सो पावन, कमल करी निर्बान ॥

चौपाई ।

धन्य जीव पुरुष शब्द उचारा । जातैं शोभा अगम अपारा ॥
 धर्मदास वचन ।

हे प्रभु सुन्यां हंस कर भंऊ । जो कछु पूछौ सो कहि देऊ ॥
 जो कछु होय आगे व्यवहारा । आगे होय सो कहौ विचारा ॥
 साहेब कबीर वचन ।

सुनु धर्मदास मैं कहौं बुझाई । आगे जस करि है अन्याई ॥
 वंश व्यालीस अचल तुम्हारा । नाद बहुत है विद विचारा ॥
 तेही पाछे चरित अस होई । कहौं प्रगट नहिं राखौं गोई ॥
 अग्नि कौन अचिन्तपुर गाऊं । तहां कौवरणन तुमहिं सुनाऊं ॥
 भ्रमत नयन विकट है काया । नाम चक्ररथी काल स्वभाया ॥
 मानै जीव सो कहौ विचारा । जस रविकोट है है मृतु सारा ॥
 ताहि नग्र की राज कुवारी । सोभा चहै सहित जनु नारी ॥
 ताकौ भेद मैं कहौं बुझाई । धरं कुम्हार के जन्मे आई ॥
 जनमत तात जननी कहँ खाई । दृष्टि परत हतन होइ जाई ॥
 जस पावक महँ तनै समाई । वहिनी खाय जो देखन आई ॥
 अग्नि समान चक्ररथी भाई । तन समान मलेछ अधिकाई ॥
 बत्तिस अंगुल तासु शरीरा । कही अगम अस दास कबीरा ॥
 श्रवण एक नौ अंगुल ताही । डेढ नाक दो जिभ्या जाही ॥
 यही स्वरूप विश्व कहँ ठावै । तेहि अन्तर रानी चालि आवै ॥
 रानी दृष्टि परे तेहि पाहीं । भाजै गज केहरि की छाहीं ॥

तैसई भाजै अंतक दूता । वसं तुम्हार थकै अजगूता ॥
मिटहि पंथ धर्मदास तुम्हारा । काल चरित्रै करै अपारा ॥

धर्मदास वचन ।

हे सतगुरु सो पुनि बतावहु । चक्ररथी को भाव बुझावहु ॥
जब दिखराय काल कौ भाऊ । धर्मदास मन त्रास जनाऊ ॥
साखी-बहुत त्रास जब कीन्हें, भये व्याकुल मति भंग ॥

चक्ररथी कौ भाव बतायो, कहाँ बचन परसंग ॥

साहिब कबीर वचन चौपाई ।

अबही भाव दूर है ताही । जनि डरो त्रास वज्रजिवचाही ॥
दृढता जान करौ गुरुवाई । जातैं जीव लोक कहैं जाई ॥
जीवको बन्ध छुडावहु यम ते । हंस मुक्तावहु नाम जतन ते ॥
साखी-नाम जतन जो करै, ताकर होइ न हानि ॥

ज्ञानसागर सुख आगर, कहै कबीर बखानि ॥

सत्य विचार-चौपाई ।

ज्ञान सागर ग्रन्थ को भाऊ । समझि बूझि के पारख लाऊ ॥
अनन्त प्रकार के शब्द पसारा । बिनु पारख नहीं होय उबारा ॥
शब्द पारख की युगती आही । गुरु मुख कहा रमैनी माही ॥
रमैनी सताईस तोहिको जानू । बूझि विचारिके हृदय आनू ॥
पारख करनकी युक्ति जब जानो । सांच झूठ की परिक्षा आनो ॥
काल दयाल को स्वरूप पिछानो । काल सन्धि झाई मन जानो ॥
सार शब्द का पाओ लेखो । उभय आनन्द तबहीं तुम देखो ॥
करु पारख तब बन्धन छूटै । बिनु पारख जमै धरि कूटै ॥

इति श्री ज्ञानसागर समाप्त ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना—

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,
“ लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर ” स्टीम प्रेस,
कल्याण-मुंबई.

खेमराज श्रीकृष्णदास,
“ श्रीवेङ्कटेश्वर ” स्टीम प्रेस,
खेतवाडी-मुंबई.

H 814

K11D

آخری درج شدہ تاریخ بریہ کتاب مستعار
لی گئی تھی مقررہ مدت سے زیادہ رکھنے کی
صورت میں ایک آنہ یومیہ دیرانہ لیا جائے گا۔
